दोनों को सम भाग में लेकर दूध में पकाकर रोगी को पीने के लिये देना चाहिए। अथवा

प्रकाशक :
सर्व-सेवा-संघ-प्रकाशन
राजघाट,
वाराणसी-२२१००१

संस्करण : सातवाँ
प्रतियाँ : ३,०००
कुल प्रतियाँ : २०,०००

मार्च, १९८८

मूल्य : चार रुपये पचास पैसे

मुद्रक :
शिव प्रेस,
ए. १०/२५, प्रह्लादघाट,
वाराणसी

प्रकाशकीय

मधुमेह एक ऐसा रोग है, जो अप्रकट रूप से शरीर को धीरे-धीरे क्षीणता की ओर ले जाता है। दवाइयों के बल पर रोगी मधुमेह की प्रतिक्रिया को उभड़ने से रोके रखते है, लेकिन भीतर ही भीतर उसकी प्रक्रिया चलती रहती है।

डॉ० शरणप्रसादजी की प्राकृतिक चिकित्सा-विषयक अनेक रचनाओं से हमारे पाठक सुपरिचित हैं। आपने दमा, हृदय-रोग, पाचनतन्त्र के रोग तथा प्राकृतिक चिकित्सा की विधि और विज्ञान पर कई पुस्तकें लिखी है। इन पुस्तकों में लेखक का दीर्घ-कालीन अनुभव निहित है।

आशा है, शरणप्रसादजी की इस रचना से मधुमेह के रोगी विशेष लाभ उठायेंगे और रोग-मुक्ति की ओर अग्रसर होंगे।

निवेदन

जून १९५८ से जून १९६० तक केन्द्रीय सरकार की तरफ से निसर्गोपचार आश्रम उरुलीकाचन में अनुसधान-योजना चलायी गयी, जिसके अन्तर्गत हम लोगो को एक अच्छी लेबोरेटरी आदि रखने की सुविधा थी। साथ ही इस योजना में एक कुशल एम० डी० डॉक्टर का महत्त्वपूर्ण सहयोग प्राप्त हुआ। सरकारी नियम के अनुसार उनका काम निरीक्षण-परीक्षण का था और आश्रम के अन्य सहयोगी मित्रो के साथ मैं चिकित्सा-कार्य मे लगा रहता था। इस सरकारी योजना की अवधि मे विभिन्न प्रकार के रोगियो ने लाभ उठाया, जिसमे मधुमेह-रोगियो की सख्या भी पर्याप्त थी।

लेबोरेटरी के कारण हम लोगो को मधुमेह-रोगियो के रक्त एव मूत्र की जाँच करने की सुविधा प्राप्त थी, जिससे हम अपने परिश्रम का परिणाम आसानी से जान सकते थे। ये परिणाम अत्यन्त उत्साहवर्धक थे। इससे हमारे भीतर एक नया अनुभवयुक्त विश्वास पैदा हुआ। इस पुस्तक मे जो पाँच महत्त्वपूर्ण उदाहरण दिये गये है, उपर्युक्त सरकारी योजना के अन्तर्गत किये गये थे

आजकल साधारण व्यक्ति को जीवन-निर्वाह के साधन आसानी से उपलब्ध नही होते। प्रत्येक रोगी चिकित्सालय मे प्रविष्ट होकर इलाज नही करा सकता। वह घर पर ही रहकर कम खर्च मे आसानी से अपना इलाज स्वय कर सके, इस भावना से प्रेरित होकर यह पुस्तक लिखी गयी है। पुस्तक मे वैज्ञानिक दृष्टिकोण अपनाया गया है, अतः जिज्ञासु पाठक इससे समुचित लाभ उठा सकेगे।

मधुमेह का रोग उच्च मध्यमवर्गीय लोगो मे अधिक पाया जाता है, क्योकि इस वर्ग के लोगो का आहार शरीर-श्रम के अनुपात मे दुगुना तो है ही। मैंने अपने चिकित्सक-जीवन मे मजदूर-वर्ग के लोगो मे पाचन-सम्बन्धी तथा अन्य अनेक रोग तो देखे है, लेकिन मधुमेह के रोगियो के कभी दर्शन नही हुए।

श्रम के अभाव मे होनेवाले अनेक रोगो मे से मधुमेह एक मुख्य रोग है। इसलिए इस मधुमेह पुस्तक को पढकर लोगो मे अगर रोग-चिकित्सा तथा निवारण की दृष्टि से श्रम या व्यायाम के प्रति रुचि पैदा हो सके तो यह लेखक की सफलता मानी जायगी।

—शरणप्रसाद

दोनों को सम भाग में लेकर दूध में पकाकर रोगी को पीने के लिये देना चाहिए। अथवा

अनक्रम

१. रोगमात्र का मूल कारण

कृत्रिम जीवन का दुष्परिणाम

सामान्य यंत्र को नियमित ढंग से संचालित किया जाय, तो वह मर्यादित समय तक निर्विघ्न रूप से काम करता रहता है। इसी तरह प्रकृति-निर्मित यंत्र-शरीर मे अगर असमय दोष उत्पन्न हो जाता है, तो इसे उसके स्वामी मानव की त्रुटियों का ही परिणाम मानना चाहिए। त्रुटि परिस्थितिवश, अज्ञानवश या जान-बूझकर भी हो सकती है। यदि प्रत्येक व्यक्ति ज्ञात त्रुटियो से अपने को बचाकर जाने हुए नियमो का नियमपूर्वक पालन करें तो शरीर पर अज्ञान या परिस्थितिवश की गयी छोटी गलतियो का अनिष्टकारी परिणाम अति अल्प या नगण्य ही होगा।

सच पूछा जाय तो आरोग्य-विषयक नियम अत्यंत सीधे-सादे और सरल हैं। प्राकृतिक नियमो की सरलता, स्पष्टता एवं उनमे छिपी हुई मधुरता की अनुभूति प्राप्त करने के लिए आवश्यक है कि हम प्रकृति के निकट निवास करें। इस तरह धीरे-धीरे हमारा जीवन प्रकृति के अनुकूल बनता जाता है। नियम के पालन मे प्रयास अपेक्षित है, परन्तु स्वभाव मे सहजता होनी चाहिए। ऐसी स्थिति मे भूख न लगने पर न खाने की ही प्रेरणा होगी, न खाने के लिए प्रयास नही करना पडेगा।

आठ वर्ष की एक ग्रामीण बालिका को बुखार चढा। बुखार मे भूख न लगने पर वह केवल पानी माँगकर पी लेती थी। उसके माता-पिता भी समझ गये कि भूख नही है, तो खिलाना बेकार है। भूख लगने पर स्वयं माँग लेगी। इस प्रकार बुखार मे आहार न देकर केवल पानी देने का पथ्य सहज ही प्रारम्भ हो गया।

जब हम प्रकृति या निसर्ग से दूर रहते हैं, तब सहज स्वभाव भूल जाते हैं। प्रत्येक व्यवहार मे कृत्रिमता आ जाती है। भूख-प्यास, बोल-

चाल आदि सभी कार्यों मे कृत्रिमता या वनावटीपन आ जाता है। लाख प्रयत्न करने पर वनावटीपन हमारा पीछा नही छोड़ता। भूख न होने पर भी सहज मे न खाने की सीधी, अचूक वात नही सूझती। इसके विपरीत स्वाद के प्रलोभन मे विविध प्रकार के पक्वान्न, मिठाइयाँ एवं मसालेदार चटपटी वस्तुएँ वनायी जाती है, ताकि भूख न होने पर भी कृत्रिम या झूठी भूख उत्पन्न करके अपथ्य वस्तुएँ भरपेट खा सके। यदि किसी व्यक्ति ने ज्वर मे कुछ भी न खाने का निर्णय किया, तो सम्बन्धी लोग आग्रहपूर्वक कुछ-न-कुछ खिला देते हैं। अप्राकृतिक अथवा कृत्रिम जीवन मे हमे यही स्वाभाविक लगता है।

(२)

हमारे जीवन मे कृत्रिमता इतनी अधिक आ गयी है कि उनसे हम अपने को पूर्णतः अलग नही कर सकते। अतः हम प्राकृतिक अथवा स्वस्थ जीवन के नियमो पर विचार करे और उनको आचरण मे उतारने का प्रयत्न करे, तो धीरे-धीरे हमारा जीवन स्वस्थ, सुन्दर और स्वाभाविन वनेगा।

स्वस्थ जीवन के चार आधार-स्तम्भ हैं :

१. युक्ताहार, २. समुचित श्रम या व्यायाम, ३. सम्यक् विश्रांति (निद्रा तथा आराम) और ४. मानसिक संतुलन।

युक्ताहार

संतुलित या युक्ताहार शारीरिक एवं मानसिक स्वास्थ्य-रक्षा का प्रमुख साधन है। लेकिन अति मात्रा मे करने पर योग्य आहार भी शरीर के लिए हानिकारक होता है। पाचन की दृष्टि से खाद्य-वस्तुओ का स्वादयुक्त एव रुचिकर होना नितान्त आवश्यक है, ताकि लालाग्रन्थि एवं आमाशय से पाचक रसो का स्राव उचित मात्रा मे हो सके। परन्तु स्वाद के लिए खाद्य-वस्तुओ के पोषक तत्त्वो की निर्मम हत्या कर दी जाती है,

तब उसकी मर्यादा का अतिक्रमण होता है। स्वास्थ्य की दृष्टि से पोषक तत्त्व एवं स्वाद दोनों का लाभ मिलना चाहिए। स्वाद विविध प्रकार से तैयार किये हुए खाद्य-पदार्थों मे नही, अपितु क्षुधा मे निहित है।

आमाशय मे पाचक रसो की स्रावजनित अनुभूति ही क्षुधा या भूख है। क्षुधित व्यक्ति ही नैतिक या स्वास्थ्य की दृष्टि से आहार का अधिकारी है। इस स्थिति मे पाचन-तन्त्र विशुद्ध तीव्र पाचक रसो के द्वारा खाद्य-पदार्थों को भलीभाँति पचाकर उनसे पोषक रस तैयार करता है। पोषक रस रक्त के माध्यम से विभिन्न अंगो मे पहुँचकर शरीर को जीवनी-शक्ति प्रदान करता है। इसीको स्वागीकरण (Assimilation) की क्रिया कहा जाता है। जिस अनुपात मे पाचक अंगों से पाचक रसो का स्राव होगा, उसी अनुपात मे क्षुधा अल्प, सौम्य या तीव्र होगी। अतएव कम भूख या क्षुधा-शून्य स्थिति मे अतिआहार करने से पाचक रसो की न्यूनता या अभाव के कारण खाद्य-पदार्थों से अम्ल (Acid) युक्त अपरिपक्व पोषक रस तैयार होता है। रक्त इस अम्ल-युक्त दूषित पोषक रस का अवशोषण करके समस्त अग-प्रत्यंगो को पहुँचाता है और इसीसे विभिन्न प्रकार के रोग पैदा होते है।

जैसे प्रज्वलित अग्नि का उपयोग करने के पश्चात् अन्त मे राख शेष बचती है, वैसे आहार से पोषक तत्त्वो के स्वागीकरण के उपरात शरीर मे अनेक प्रकार के निरुपयोगी दूषित पदार्थ बच जाते हैं। इन विकृत दूषित पदार्थों के आकार एवं प्रकार के अनुरूप उनको उत्सर्ग करने के चार प्रधान अंग हैं :

१. फेफड़े : इनके आलवीलस (Alveolus) शिराओ के रक्त से कार्बन-डायोक्साइड नामक दूषित वायु खीचकर निःश्वसन (Expiration) द्वारा बाहर निकाल देते है।

२. वृक्क (Kidney) : रक्त जब वृक्क मे पहुँचता है, तब उसका दूषित जलीय अंश छनकर मूत्र-मार्ग से बाहर निकल जाता है।

३. त्वचा (चमड़ी) : इसी प्रकार त्वचा की स्वेद-ग्रंथियाँ रक्त से विकृत जलीय अंश को पसीने के रूप मे बाहर निकालती हैं ।

४. मल मार्ग : पोषक तत्त्वों के अवशोषण (Assimilation) के पश्चात् बृहदान्त्र मे जो ठोस मल शेष रह जाता है, वह भी पूर्णतया निरुपयोगी होने के कारण गुदा-मार्ग से बाहर निकल जाता है ।

उपर्युक्त उत्सर्गी-अंग शरीर को शुद्ध रखने के लिए सतत कार्यरत रहते हैं ।

शरीर मे मुख्यतः दो प्रकार के कार्य अनवरत रूप से हो रहे है : पहला पोषक तत्वो का स्वागीकरण (Assimilation) तथा दूसरा उत्सर्गीकरण (Excretion) । आरोग्य की दृष्टि से दोनों का समान महत्त्व है ।

लेकिन जब अम्लयुक्त अपरिपक्व पोषक रस से शरीर के विभिन्न संस्थानो को ठीक परिमाण मे पोषण नही मिलता, तब वे क्रमशः दुर्बल होने लगते हैं । अतएव उत्सर्गी-तत्र भी दुर्बलतावश शरीर की विभिन्न कोशिकाओ (Cells) से दूषित द्रव्यो को पूर्णतया बाहर नही निकाल पाता । महत्त्वपूर्ण उत्सर्गी-अंग, बड़ी आँत भी मल-विसर्जन कार्य पूरी तरह नही कर पाती । इसलिए मल-संचय की अनिष्टकारी प्रक्रिया शुरू हो जाती है । इस प्रकार उत्सर्गी-अंगो की असमर्थता के कारण शरीर की विभिन्न कोशिकाओ मे दूषित द्रव्यों का संचय होने लगता है । लेकिन विशेष महत्त्व की बात यह है कि मल-संचय की यह प्रक्रिया सर्वप्रथम शरीर के दुर्बलतम अंग की कोशिकाओ मे ही आरम्भ होती है । कालान्तर मे सचित दूषित द्रव्यो से जीव-विष (Toxins) का निर्माण होता है ।

अतएव स्वागीकरण (Assimilation) एवं उत्सर्जन (Excretion) दोनो क्रियाओ मे दोष उत्पन्न होने पर रक्त मे अम्लता तथा दुर्बलतम अवयवो की कोशिकाओं मे जीव-विष की उत्पत्ति होती है । क्रमशः

रक्ताम्लता, दूषित द्रव्यो का संचय एवं जीव-विष की उत्पत्ति, ये तीनों परस्पर की वृद्धि मे कारणीभूत हैं। इस क्रम से शरीर मे दोष-वृद्धि होती रहती है।

समुचित श्रम या व्यायाम

जैसे स्वस्थ जीवन के लिए आहार का महत्त्व है, वैसे ही श्रम या व्यायाम का भी महत्त्व है। दोनो समान रूप से आवश्यक है। पौष्टिक वस्तुओं को सिर्फ पेट मे डालने से ही शक्ति या पोषण नही मिलता। श्रम या व्यायाम द्वारा उनका पूर्णतः पाचन होने पर स्वागीकरण के पश्चात् ही जीवनी-शक्ति प्राप्त होती है। अन्यथा शरीर मे शक्ति के स्थान पर विकृति पैदा होने लगती है। इसीलिए आहार की तरह श्रम या व्यायाम भी रुचिपूर्वक प्रेम से करना चाहिए। व्यायाम की एक बार रुचि लग जाने पर उसमे आनन्द आने लगता है।

शहरी जीवन मे मानसिक श्रम की अधिकता एव शरीर-श्रम की न्यूनता या शून्यता पायी जाती है। मानसिक श्रम के पश्चात् शक्ति के अनुसार सौम्य व्यायाम करने से ज्ञान-तन्तुओ का तनाव (Nervous Tension) कम होता है और उनको काफी विश्राति मिलती है। दूसरी ओर मासपेशियो की शक्ति बढती है। मानसिक श्रम के बाद क्रीड़ायुक्त या खेल-कूद का व्यायाम अधिक अनुकूल होता है।

सर्वोत्तम तो यह है कि दैनिक कार्यो मे ही इतना श्रम हो जाय कि अलग से व्यायाम करने की आवश्यकता ही न रहे, जैसे कि किसान या मजदूर के जीवन मे होता है। आधुनिक वैज्ञानिक युग मे सब लोगों के लिए यह सम्भव नही है। अतएव घूमना, तैरना, आसन आदि व्यायाम करना चाहिए। उत्पादक व्यायाम, जैसे चक्की चलाना, बागवानी करना, लकड़ी फाड़ना आदि से शरीर तथा मन दोनो को लाभ होता है।

समुचित श्रम या व्यायाम से सच्ची भूख लगती है और भूख में किये गये आहार से पाचन-तंत्र के द्वारा विशुद्ध पोषक रस तैयार होता है,

जिसके स्वागीकरण से शरीर के समस्त सस्थानो की कार्यक्षमता वढ़ती है। विशुद्ध पोषक तत्त्वो से पुष्ट शरीर के मल-मूत्र संस्थान, फेफडा तथा त्वचा आदि शरीर-शुद्धि का कार्य अच्छी तरह करते हैं। पुष्ट एवं शुद्ध शरीर मे रोग उत्पन्न होना असम्भव है। इसके विपरीत व्यायाम की कमी या अभाव मे स्वागीकरण एव मल-विसर्जन दोनो प्रक्रियाओ मे बाधा उपस्थित होने से रक्ताम्लता एवं कोशिकाओ मे दूषित द्रव्यो की वृद्धि होती है।

अतिश्रम या व्यायाम से भी शारीरिक शक्ति क्षीण होती है। पाचक एवं उत्सर्गी-अगो की दुर्बलता बढती है। इससे रक्त मे अम्लता एवं शरीर मे दूपित द्रव्य सचित होने लगते है। अतएव आहार की तरह श्रम या व्यायाम युक्त मात्रा मे करना चाहिए। अति या अल्प दोनो वर्जित है।

सम्यक् विश्रांति

मानसिक या शरीर-श्रम से विभिन्न सस्थानो की असंख्य कोशिकाएँ प्रतिक्षण नष्ट होती रहती है। श्रम के अनुपात मे मृत कोशिकाओ की संख्या मे न्यूनाधिकता होती है। उसके स्थान पर नवीन कोषो का निर्माण-कार्य विश्राति-काल मे ही होता है। प्रगाढ़ नि.स्वप्न निद्रा विश्राति का उत्कृष्ट उपाय है। दिनभर का थका हुआ आदमी रात्रि की प्रगाढ निद्रा के पश्चात् शक्तिवान् वनकर पुनः कठिन श्रम करने की सामर्थ्य प्राप्त कर लेता है। परिश्रात पेशियाँ, उत्तेजित ज्ञानतन्तु, परेशान मस्तिष्क, क्रुद्ध-दु.खित या ग्लानियुक्त मन इन सबको नयी शक्ति, नयी आशा एवं नया जीवन केवल विश्राति ही प्रदान कर सकती है।

विश्राति की कमी या अभाव से नवीन कोशिकाओ के निर्माण-कार्य मे वाधा उपस्थित होती है। नयी कोशिकाओ के अभाव मे शरीर के समस्त तंत्रो की शक्ति क्षीण होती है। फलतः स्वागीकरण मे दोप उत्पन्न होने के कारण रक्त की अम्लता मे वृद्धि होती है एव उत्सर्गी सस्थान भी मृत कोशिकाओ के अम्ल पदार्थो को शरीर से पूर्णतः बाहर नही निकाल

पाता। ये सब दूषित द्रव्य शरीर मे जमा होकर जीव-विष (Toxins) का निर्माण करते है।

विश्राति के द्वारा उसीको नयी शक्ति प्राप्त होती है, जिसने यथाशक्ति श्रम करके शरीर को क्लात कर दिया है। मानसिक या शरीर-श्रम से जी चुरानेवाले व्यक्ति को विश्राति के पश्चात् नव-जीवन प्राप्त नही होता, अपितु इससे आलस्य एवं जडता मे वृद्धि होती है। श्रम के अनुपात मे ही विश्रांति का लाभ मिलता है। अति आहार या अति श्रम की तरह अति विश्राति से (रुग्णावस्था को छोडकर) शारीरिक एव मानसिक विकारो दोषो) की उत्पत्ति होती है। वास्तव मे अति विश्राति, अल्प श्रम या आलस्य एक ही वस्तु है। अल्प-श्रम से रक्त-सचार (Circulatory), पाचक, उत्सर्गी आदि तत्रो के कार्यो मे बाधा होती है, जिसके कारण रक्ताम्लता एव कोशिकाओ मे दूषित द्रव्यो की वृद्धि होती है। स्वास्थ्य को दृष्टि से अति या अल्प विश्राति दोनो हानिकारक है। सम्यक् विश्राति ही हितकर है।

मानसिक संतुलन

आहार, श्रम, विश्राति एवं मानसिक संतुलन ये सब परस्परावलबी है, जो एक-दूसरे के परिणामस्वरूप अभिव्यक्त होते है। स्वास्थ्य की दृष्टि से मानसिक सतुलन का अतिशय महत्त्व है, क्योकि मानसिक असंतुलन से सभी संस्थानो मे क्षोभ एवं तनाव उत्पन्न होता है। क्रुद्ध रोगी के रक्तचाप मे वृद्धि होना इसका एक सामान्य उदाहरण है।

मानसिक संतुलन मे क्रोध, दु:ख, क्षोभ, ईर्ष्या, राग-द्वेष आदि विघ्नरूप है। इसका अनिष्ट परिणाम सर्वप्रथम ज्ञान-तन्तु पर पडता है, जिसके द्वारा शरीर के अन्य सभी सस्थान नियंत्रित एवं संचालित होते है। इसलिए ज्ञान-तन्तु के तनाव एवं क्षोभ के कारण पाचक, पेशी, श्वसन आदि सस्थानो के कार्य मे विक्षेप होता है। परिणामस्वरूप वे स्वागीकरण एव उत्सर्गीकरण-कार्य सुचारु रूप से नही कर पाते।

इस प्रकार मानसिक सतुलन भी रोग का प्रमुख कारण वन सकता है।

इसके अतिरिक्त शुभ-अशुभ, संयम-असयम, अच्छे-बुरे कार्यो के संकल्प सर्वप्रथम मन मे ही उठते है, तत्पश्चात् शरीर की इन्द्रियाँ उनका अनुसरण करती है। इससे यह भी निष्कर्ष निकलता है कि शरीर मे प्रकट होनेवाले रोग-लक्षणों का अतिसूक्ष्म, परन्तु निश्चित सम्बन्ध मानसिक असन्तुलन से है।

(३)

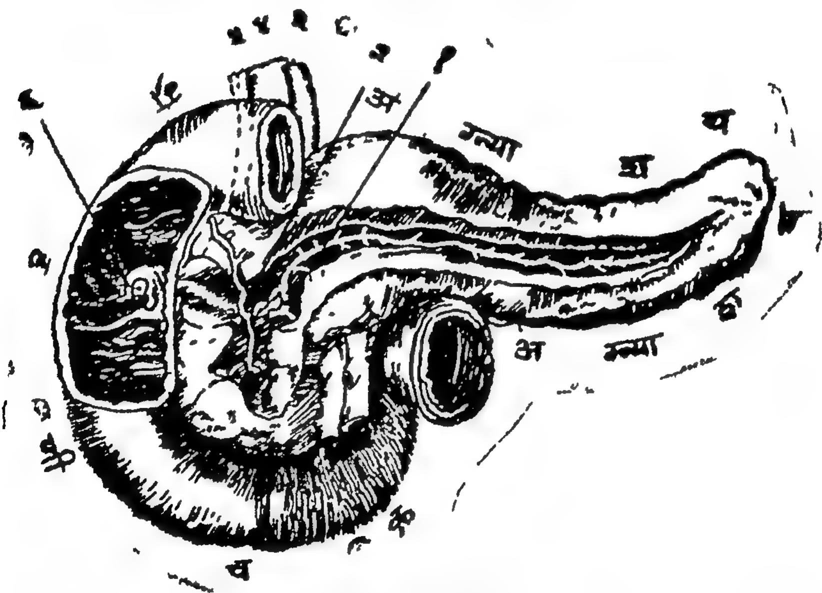
उपर्युक्त विवेचन से यह स्पष्ट होता है कि आहार, श्रम एवं विश्राति के असंयम तथा मानसिक असन्तुलन से अवशोषण एवं उत्सर्जन, दोनों कार्यो मे बाधा उपस्थित होती है। सबसे पहले रक्ताम्लता की उत्पत्ति एवं वृद्धि होती है और बाद मे दुर्बलतम अंगो की कोशिकाओं मे दूषित द्रव्यो का सचय होता है, जो कालान्तर मे जीव-विष का निर्माण करते हैं। इसीलिए दुर्बलतम अंग सबसे पहले रोग-ग्रस्त होता है।

शारीरिक शक्ति एवं अवस्था-भेद के अनुसार प्रत्येक व्यक्ति मे रक्ताम्लता या दूषित द्रव्यो को सहन करने की मर्यादित शक्ति होती है। सशक्त व्यक्ति दो-चार दिन के आहार, श्रम, विश्राति आदि के असंयम से रोगग्रस्त नही होता। उसको सर्वप्रथम केवल सुस्ती, शरीर मे भारीपन, भूख एवं कार्यशक्ति मे कमी आदि की अनुभूति होती है। लेकिन अतिदुर्बल व्यक्ति के (अशक्त व्यक्ति के) असयम करने पर कब्ज, सिरदर्द, खाँसी, अतिसार, ज्वर आदि जैसे एक या अनेक रोग-लक्षण प्रकट हो सकते है, क्योंकि उनका सहनीय मर्यादा-बिन्दु (Tolerence or Saturation Point) निम्न स्तर पर है, तथापि लम्बी अवधि के सतत असंयम से सशक्त व्यक्ति का भी सहनीय मर्यादा-बिन्दु निम्न स्तर पर आ जाता है, क्योकि लगातार अति आहार या श्रम के कारण शरीर थककर दुर्बल हो जाता है। फलतः दुर्बलतम अंग मे रक्ताम्लता एवं जीव-विष के प्रतिक्रियास्वरूप रोग-लक्षण प्रकट होते है।

इसी तरह दीर्घकालीन श्वेतसार, मिष्टान्न तथा स्नेहयुक्त तले-भुने हुए पदार्थ के अतिसेवन, व्यायाम की न्यूनता आदि कारणो से अग्न्याशय (Pancreas) क्लांत होकर अन्त मे दुर्बल हो जाता है और अपना नियत कार्य नहीं कर पाता। तभी मधुमेह नामक रोग पैदा होता है।



२. अग्न्याशय का संक्षिप्त परिचय



अग्न्याशय

१. अग्न्याशय वाहिनी २. उपअग्न्याशय वाहिनी ३. यकृत धमनी, ४. प्रतिहारिणी शिरा, ५. पित्तवाहिनी, ६. अग्न्याशय एवं पित्तवाहिनी द्वार।

अग्न्याशय गुलाबी भूरे रंग की एक अति मुलायम ४¾" से ६" लम्बी तथा चिपटी ग्रन्थि है। इसके असंख्य कोष अंगूर के गुच्छे की तरह दिखाई देते हैं। इसकी रचना कुछ-कुछ लालाग्रन्थि से मिलती-जुलती है। इसके सबसे अधिक चौड़े भाग को सिर कहते है, जो ग्रहणीचक्र से पूर्णतः आवेष्टित होता है। यह ग्रन्थि शरीर के मध्य भाग मे, बायी ओर आमाशय के ठीक नीचे, किन्तु पिछले भाग मे होती है। इसका अन्तिम सिरा (जिसको पूँछ भी कहते हैं) बायी ओर की पसलियों तक पहुँचकर तिल्ली को स्पर्श करता है।

लैंगरहैन्स की द्वीपिकाएँ (Langerhans-Islets):

ये द्वीपिकाएँ विचित्र प्रकार के अन्तःस्रावी सूक्ष्म रक्तवाहिनियो से निर्मित है। इन्ही द्वीपिकाओ से इनसुलिन नामक विशिष्ट रस पैदा होता है, जिसकी सापेक्ष या वास्तविक कमी के कारण मधुमेह रोग होता है।

ये द्वीपिकाएँ अग्न्याशय के ऊतको (Tissues) मे बिखरी हुई होती हैं, एक ही स्थान पर समूह रूप मे नही होती। इनकी कुल संख्या ३०-४० तक होती है। सब मिलाकर इनका औसत परिमाण १% से कुछ अधिक होता है। लेकिन बच्चो के अग्न्याशय मे ये द्वीपिकाएँ ०.९% से ३.६% तथा युवको मे ०.९% से २.७% तक पायी जाती है। जब इन द्वीपिकाओ की सख्या ०.९% से कम हो जाती है, तभी इनसुलिन की अल्पता के फलस्वरूप रक्त मे शर्करा की मात्रा बढ जाती है और जब इस अतिरिक्त शर्करा का उत्सर्ग मूत्र-मार्ग से होने लगता है, तभी मधुमेह रोग का सूत्रपात होता है।

लेकिन कभी-कभी इन द्वीपिकाओं की औसत संख्या जब ३.६% से अधिक हो जाती है और शर्करा अधिक मात्रा मे निकलने लगती है, तब रक्ताल्पशर्करा (Hypoglycaemia) की बीमारी हो जाती है, अर्थात् रक्त मे शर्करा की मात्रा सामान्य स्तर से भी कम हो जाती है।

लैंगरहैन्स की द्वीपिकाओ मे चार प्रकार की कोशिकाएँ होती हैं जिनका औसत परिमाण प्रायः निम्न प्रकार रहता है :

(अ) अल्फा कोशिकाएँ २०%
(आ) बीटा ,, ७५%
(इ) ग्यामा ,, अल्प संख्या मे
(ई) डेल्टा ,, ५%

प्रत्येक द्वीपिका मे उपर्युक्त कोशिकाओ की औसत सख्या मे थोड़ी भिन्नता हो सकती है।

बीटा नामक कोशिकाओ से ही इनसुलिन का स्राव होता है, इसीलिए बीटा कोशिकाओ से मधुमेह-रोग का घनिष्ठ सम्बन्ध है, अन्य कोशिकाओं के कार्य के विषय मे अब तक निश्चित रूप मे पता नही चल पाया है।

लैंगरहैन्स द्वीपिकाओ की आकृति दानेदार पेशियो की तरह होती है। ये पेशियाँ सूक्ष्म रक्तवाहिनियो के जाल मे अच्छी तरह आवेष्टित होने के कारण इनका स्राव (इनसुलिन) रक्त मे स्वतन्त्र रूप से आवश्यक मात्रा मे मिलता रहता है। जिस प्रकार रक्तवाहिनियाँ छोटी आँत से आवश्यक पोषक तत्त्वो का अवशोषण कर सकती है, उसी तरह इनसुलिन द्रव्य का अवशोषण रक्तवाहिनियाँ आवश्यकतानुसार कर लेती है। इनसुलिन स्राव का नियत्रण मुख्यतया रक्त-शर्करा के द्वारा ही होता है। रक्त मे शर्करा की मात्रा बढने पर द्वीपिकाओ को इनसुलिन का स्राव एवं कार्य अधिक करना पड़ता है, इसके विपरीत रक्त मे शर्करा की कमी होने पर उनका स्राव एवं कार्य घटता है। संक्षेप मे रक्त शर्करा के अनुसार इनसुलिन का स्राव निरन्तर न्यूनाधिक मात्रा मे होता रहता है, ताकि रक्त मे शर्करा की मात्रा स्थिर रहे एवं उसमे आकस्मिक वृद्धि या कमी न होने पाये।

अग्न्याशय के आन्तरिक स्राव (इनसुलिन) से मुख्यतः दो प्रकार के कार्य सम्पन्न होते हैं :

(अ) शरीर मे शक्ति एवं ऊर्जा उत्पन्न करने के लिए ग्लूकोज या शर्करा का ज्वलन अर्थात् इनसुलिन के सम्पर्क से ही ग्लूकोज द्वारा शरीर को शक्ति एवं उष्णता प्राप्त होती है।

(आ) दैनिक उपयोग के पश्चात् अवशिष्ट ग्लूकोज को ग्लाईकोजन मे रूपान्तरित करके यकृत एवं पेशियों मे संग्रह करना।

मधुमेह-रोग के कारण लैंगरहैन्स की द्वीपिकाओं मे विकृति उत्पन्न होती है, जिससे उनकी संख्या घट जाती है तथा उनकी कार्यक्षमता भी घट जाती है। ये अपविकसित (Dcgenerate) होने लगती है। कभी-कभी ये अपुष्ट (Atrophic) एवं कठोर (Hard) भी हो जाती है। फिर भी इन द्वीपिकाओ की संख्या केवल १% होने के कारण मधुमेहियो के अग्न्याशय स्थूल दृष्टि से स्वस्थ दिखाई देते है।

३. मधुमेह-रोग का हेतु-विज्ञान

(१) आनुवंशिक प्रवृत्ति

मधुमेह आनुवंशिक भी होता है। माता-पिता के मधुमेही होने पर उनकी सन्तानो के मधुमेही होने की सम्भावना अधिक रहती है। फिर भी मधुमेह को निश्चित रूप से आनुवंशिक या परम्परागत रोग नही कहा जा सकता, क्योकि इसमे अनेक अपवाद भी मिलते है।

सामान्यतः आनुवंशिक मधुमेह अल्पायु में होता है और तीव्र गति से बढता है, जो धीरे-धीरे कष्टसाध्य एवं घातक रूप धारण कर लेता है। इसके विपरीत केवल आहार-विहार आदि दोषों से सम्बद्ध मधुमेह उत्तर आयु मे होता है, जिसकी वृद्धि की गति सौम्य होती है और वह अपेक्षाकृत सुसाध्य होता है।

आहार, व्यवसाय, आदत आदि के कारण कुटुम्बियो मे मधुमेह की वीमारी प्रवेश कर सकती है। उदाहरण-सख्या ४ का रोगी आनुवंशिक मधुमेही है।

(२) आहार

मधुमेह-रोग का आहार के साथ अत्यन्त घनिष्ठ सम्बन्ध है। आज-कल हमारे आहार मे श्वेतसारीय खाद्य-पदार्थों की प्रचुरता रहती है। चावल, गेहूँ, ज्वार, बाजरा, आलू, शकरन्द, सूरन (जमीकंद) आदि का उपयोग अधिक परिमाण मे किया जाता है। बचपन से पिपरमिंट की गोलियाँ, टॉफी, चाकलेट, मिश्री आदि खाने की आदत पड़ जाती है। परिवारो मे शक्कर, डालडा, तेल आदि से बने मिष्ठान्नो का काफी उपयोग होता है। मिष्ठान्न एवं स्नेहयुक्त पदार्थों के अतिसेवन से मधुमेह पैदा होता है।

जिस प्रदेश मे चीनी का उत्पादन एवं सेवन बढा है, वहाँ मधुमेह के रोगी अधिक पाये जाते हैं, जैसे अमेरिका। गुड़ मे यह दोष नही है, क्योकि उसमे क्षारीय लवण रहते हैं।

विटामिनो की न्यूनता भी मधुमेह को पैदा करने मे सहायक होती है। इनमे विटामिन ए, बी और सी मुख्य है। वैसे मासाहारी एवं शाका-हारी दोनो को मधुमेह समान रूप से लागू होता है। लेकिन मासाहारियो मे इसका उपद्रव अधिक तीव्र तथा शाकाहारियो मे सौम्य होता है।

(३) स्थूलता

आहार एवं स्थूलता का अति निकट का सम्बन्ध है। स्थूल व्यक्तियों मे यह रोग विशेष रूप से पाया जाता है। केवल स्नेह (चरबी) के अति सेवन से शरीर स्थूल होता है, ऐसी बात नही है। अत्यधिक मात्रा मे श्वेतसार एवं मिष्ठान्न के सेवन से भी दैनिक आवश्यकता से अधिक शर्करा चरबी मे रूपान्तरित होकर शरीर के विभिन्न अगो मे संग्रहीत होती है। यह मेद-वृद्धि का वास्तविक कारण है।

शर्करा को चरबी मे परिवर्तित करने की क्रिया (लैंगरहैन्स द्वीपिका-स्राव) इनसुलिन द्वारा होती है। अतएव अधिक श्वेतसार या मिष्ठान्न-सेवन से इन द्वीपिकाओ को अधिक कार्य करना पडता है। लैंगरहैन्स की द्वीपिकाएँ अतिश्रम का भार मर्यादित अवधि तक ही सहन कर सकती हैं। जब तक ये अतिरिक्त शर्करा को चरबी मे परिवर्तित करती है, तब तक इनका संग्रह शरीर मे मेद-वृद्धि के रूप मे उदर, जंघा, नितम्ब, छाती आदि स्थानो मे होता रहता है। कालान्तर मे ये द्वीपिकाएँ अतिश्रम के कारण क्षीण या अपुष्ट (Atrophic) होने लगती है, जिससे इनके द्वारा स्रवित इनसुलिन की मात्रा कम होती है। उस स्थिति मे श्वेतसार या मिष्ठान्न द्वारा निर्मित अति शर्करा का रूपान्तर पुनः चरबी मे नही हो पाता और वह मूत्र-मार्ग से बाहर निकलने लगती है। इस प्रकार स्थूलता के पश्चात् यदि आहार, व्यवसाय एवं आदतो मे परिवर्तन नही किया गया तो मधुमेह-रोग की सम्भावना सदैव बनी रहती है।

(४) आदतें

यह रोग प्रायः वैभवयुक्त, आलसी, श्रम या व्यायाम न करनेवाले व्यक्तियो मे पाया जाता है। दूकानदार, अध्यापक, वकील एवं ऑफिसो के कर्मचारियो का बैठा जीवन भी मधुमेह-रोग की उत्पत्ति मे सहायक होता है। इस प्रकार के जीवन से पहले स्थूलता आती है और बाद मे मधुमेह पैदा होता है। इसके विपरीत कठिन श्रम करनेवाले किसान-मजदूरो मे यह रोग प्रायः नही पाया जाता।

(५) आयु

साधारणतः यह रोग ३५ से ४० वर्ष के व्यक्तियो को होता है। इसलिए इसको मध्यम-आयु का रोग भी कहते है। लेकिन मधुमेही माता-पिता की नवजात सतान मे भी यह रोग मिल सकता है। ऐसे अल्पायु के मधुमेही कम पाये जाते हैं, परन्तु रोगाक्रान्त होने पर उनकी रोग-वृद्धि

तीव्र गति से होती है। ७०-८० वर्ष की आयु मे यह रोग क्वचित् ही प्रारम्भ होता है।

(६) लिंग (Sex)

पहले मधुमेह-रोगियों मे पुरुषो की संख्या ७५% एव स्त्रियो की संख्या २५% के अनुपात मे थी। अर्थात् स्त्रियो की अपेक्षा पुरुषो को यह रोग तिगुने परिमाण मे होता था, क्योकि पहले की स्त्रियाँ अल्पाहारी एवं परिश्रमी होती थी। लेकिन आजकल अतिआहार, आलस्य एवं वैभव-युक्त आधुनिक जीवन के कारण स्त्रियो मे भी यह रोग पहले की अपेक्षा अधिक फैल रहा है।

(७) मनःस्थिति

दीर्घकालीन मानसिक क्लेश, भय, चिंता, अशांति इत्यादि मानसिक अवस्थाओं मे अधिवृक्क (Adrenal), गलग्रन्थि (Thyroid) आदि ग्रन्थियो मे क्षोभ उत्पन्न होने पर क्षणिक मूत्र-शर्करा की उत्पत्ति हो सकती है। मन शान्त होने पर पुनः मूत्र शर्करारहित हो जाता है। ●

४. शरीर में शर्करा-निर्माण

शारीरिक शक्ति प्राप्त करने के लिए हम प्रतिदिन अनेक प्रकार के खाद्य-पदार्थो का सेवन करते हैं। उनमे मुख्यतः कार्बोहाइड्रेट, प्रोटीन, स्नेह, जल, विटामिन एवं खनिज द्रव्य होते है।

मधुमेह-रोग की दृष्टि से केवल कार्बोहाइड्रेट, प्रोटीन एवं स्नेह के उपापचय (Metabolism) का विशेष महत्त्व है। जल, विटामिन एवं खनिज शरीर के लिए अत्यन्त उपयोगी होते हुए भी उनके उपापचय से मधुमेह का प्रत्यक्ष सम्बन्ध नही आता।

(१) **कार्बोहाइड्रेट :** कार्बोहाइड्रेट जातीय खाद्य-पदार्थ के पाचन से तीन प्रकार की शर्करा तैयार होती है : (१) ग्लूकोज (Glucose), (२) गैलेक्टोज (Galactose), (३) फ्रूक्टोज (Fructose)। इनमे ग्लूकोज का परिमाण सबसे अधिक रहता है। ग्लूकोज की विशेषता यह है कि वह अपने मूल स्वरूप मे ही रक्त मे मिल सकता है, परन्तु गैले-क्टोज एवं फ्रूक्टोज अवशोषित होकर पहले यकृत मे पहुँचते है। वहाँ उनका रूपान्तर ग्लूकोज मे होता है, तभी वे शरीर के लिए उपयोगी बनते है। शरीर मे कार्बोहाइड्रेट का उपयोग केवल ग्लूकोज के माध्यम से ही होता है।

शरीर कार्बोहाइड्रेट निर्मित ग्लूकोज का उपयोग निम्न प्रकार से करता है :

(अ) ज्वलन (Comhbstion) द्वारा शक्ति एवं ऊर्जा उत्पन्न करना,

(आ) ग्लाईकोजन के रूप मे यकृत एवं पेशियो मे सग्रह करना,

(इ) वसा मे रूपान्तरित करके उदर, जंघा, नितम्ब (चूतड़) आदि अंगो मे एकत्र करना,

(ई) दुग्धाम्ल (Lactic-Acid) मे परिवर्तित करके पेशियो मे संचय करना।

आवश्यकतानुसार सचित ग्लाईकोजन, वसा एवं दुग्धाम्ल पुनः ग्लूकोज मे परिवर्तित होकर शरीर को शक्ति एवं ऊर्जा प्रदान करते है।

(२) **प्रोटीन :** पाचन होने पर इनका रूपान्तर एमिनो-अम्ल (Amino-Acid) मे होता है। यह अम्ल शरीर के समस्त कोषो को पोषण देता है एवं उनकी क्षति पूर्ति भी करता है। प्रत्येक कोष इसका आशिक संग्रह भी करता है, लेकिन यह संग्रह-कार्य पेशी एवं यकृत कोषो मे विशेष रूप से होता है।

उपर्युक्त विधि से प्रोटीन का करीव ५२ प्रतिशत व्यय हो जाता है। अंत मे प्रोटीन का अवशिप्ट ५८ प्रतिगत (अ-प्रोटीन अग Non-Protein) ग्लूकोज मे परिवर्तित होकर शक्ति उत्पादन एवं सग्रह करने के उपयोग मे आता है।

(३) स्नेह : पाचन के उपरान्त इनका परिवर्तन वसाम्ल (Fatty-Acid) और ग्लिसरीन (Glyccrine) मे होता है। अवशोषण के पश्चात् ये पुनः शरीरोपयोगी वसा मे रूपान्तरित होकर अधिकाश त्वचा के नीचे वपा ((Omentum), वृक्क आदि अंगो के चारों ओर एवं आशिक रूप मे यकृत तथा कोशिकाओ (Tissues) मे सचित होती हैं। इस प्रकार वसा का $\frac{9}{10}$ भाग खर्च हो जाता है।

शेष $\frac{9}{10}$ भाग शक्ति एव ऊर्जा मे व्यय होता है। वसा से शक्ति उत्पन्न करने के लिए शर्करा नितान्त आवश्यक है—जिस प्रकार अग्नि के लिए ईंधन की। लेकिन यकृत की यह विशेषता है कि वह संचित वसा का परिवर्तन शर्करा मे कर सकता है।

शर्करा का सचय एवं ज्वलन-विधि

ऊपर वताया जा चुका है कि कार्बोहाइड्रेट का १००% प्रोटीन का, ५८% एवं स्नेह का १०% ग्लूकोज मे परिवर्तित होता है या किया जाता है। शरीर मे प्रस्तुत कुल शर्करा का ८५% कोशिकाओ (Tissues) मे सचित रहता है तथा शेष केवल १५% रक्त मे रहता है। विशेष बात यह है कि इनसुलिन के सहयोग से ही ग्लूकोज का सचय एवं ज्वलन सम्भव होता है।

रक्त-शर्करा का नियन्त्रण

स्वस्थ व्यक्ति के रक्त मे शर्करा की मात्रा ७० से १२० मि० ग्रा० प्रतिशत क्यूबिक सेंटीमीटर होती है। रक्त-शर्करा को स्वाभाविक मर्यादा मे रखने के लिए शरीर को निम्न अंगो एवं ग्रंथियों से सहायता मिलती है :

१. अग्न्याशय ग्रन्थि, २. यकृत ग्रन्थि, ३. पिट्यूटरी (Pituitary) ग्रन्थि, ४. उपवृक्क (Adrenal) ग्रन्थि और ५. थाइरायड (Thyroid) ग्रन्थि।

१. अग्न्याशय : रक्त-शर्करा को मर्यादित रखने के लिए अग्न्याशय का अन्त.स्राव इनसुलिन सबसे अधिक प्रभावशाली साधन है। रक्त-शर्करा की न्यूनाधिकता के अनुसार ही इनसुलिन के स्राव मे परिवर्तन होता है। रक्त मे शर्करा की मात्रा अधिक होने पर अग्न्याशय से इनसुलिन का स्राव अधिक मात्रा मे होता है, ताकि आवश्यक शक्ति एवं उष्णता प्राप्त करने के पश्चात् अवशिष्ट शर्करा का संचय यकृत, पेशी आदि स्थानो मे हो जाय और रक्त-शर्करा की मात्रा मे वृद्धि न हो। रक्त मे शर्करा की कमी होने पर उसका स्राव भी अल्प मात्रा मे होता है, जिससे रक्त मे शर्करा की न्यूनता न हो जाय।

इस प्रकार स्वस्थ अग्न्याशय शर्करा का उपयोग बहुत किफायत एवं विवेकपूर्वक करता है, ताकि रक्त मे उसकी एकाएक वृद्धि या कमी न हो, क्योकि दोनो अवस्थाएँ शरीर के लिए अनिष्टकारी है।

२. यकृत : भोजन के पश्चात् रक्त-शर्करा मे १५०-१६० मिलिग्राम प्रतिशत तक वृद्धि हो जाती है, जब कि स्वाभाविक रक्त-शर्करा केवल ७०–१२० मिलिग्राम प्रतिशत ही है। इस (४० से ७० मिलिग्राम प्रतिशत) अतिरिक्त रक्त-शर्करा को यकृत ग्लाईकोजन के रूप मे परिवर्तित करता है, जो यकृत एवं पेशियो मे संग्रहीत होता है।

यकृत निम्न प्रकार के महत्त्वपूर्ण कार्य करता है :

(अ) कार्बोहाइड्रेट से निर्मित गैलेक्टोज एवं फ्रूक्टोज आदि शर्करा को ग्लाईकोजन मे परिवर्तित करना।

(आ) कार्बोहाइड्रेट से भिन्न दुग्धाम्ल, बसाम्ल, एमिनो-अम्ल आदि द्रव्यो से ग्लाईकोजन या सीधा ग्लूकोज बनाना।

(ङ) संग्रहीत ग्लाईकोजन का आवश्यकतानुसार ग्लूकोज मे रूपान्तर करना।

लेकिन शर्करा उपापचय की सभी महत्त्वपूर्ण क्रियाओ मे यकृत को पूर्णतः इनसुलिन पर ही निर्भर रहना पडता है। वह इनसुलिन के बिना परिवर्तन या संग्रह-कार्य सम्पन्न करने मे असमर्थ है। इसीलिए मधुमेह की प्रत्यक्ष प्रतिक्रिया यकृत पर नही होती।

तथापि यकृत के तन्तूत्कर्ष (Fibrosis) या ऊतिगलन (Necrosis) अवस्था मे उसकी उपर्युक्त सभी प्रक्रियाओं मे बाधा होती है, अर्थात् यकृत शर्करा को ग्लाईकोजन मे परिवर्तित नही कर पाता, जिससे रक्त मे शर्करा की मात्रा बढ जाती है। इस प्रकार विकृत यकृत अप्रत्यक्ष रूप से मधुमेह उत्पन्न कर सकता है। इसलिए जिस मधुमेही के यकृत मे कुछ दोष रहता है, उसको आरोग्य-लाभ करने मे विलम्ब या कठिनाई उपस्थित होती है।

३. पिट्यूटरी ग्रन्थि : इस ग्रन्थि से विभिन्न प्रकार के हारमोन (Harmone) स्रवित होते है। उनमे से केवल एक हारमोन का आहार उपापचय से प्रत्यक्ष सम्बन्ध है। इसलिए पिट्यूटरी ग्रन्थि की विकृति से मूत्र-शर्करा या रक्तातिशर्करा-रोग उत्पन्न होता है।

४. उपवृक्क ग्रन्थि : इस ग्रन्थि के बाह्य भाग (Cortex) के अन्तःस्राव से एमिनो-अम्ल का परिवर्तन शर्करा मे होता है तथा उसके अन्तस्थ-भाग (Medulla) के अन्तःस्राव के सहयोग से यकृत ग्लाईकोजन को ग्लूकोज मे रूपान्तरित करता है। अर्थात् इस ग्रन्थि के अन्तःस्रावो के कारण रक्त मे शर्करा न्यूनाधिक उत्पन्न होती है।

५ थाइरायड (Thyroid) ग्रन्थि : इस ग्रन्थि को पिट्यूटरी ग्रन्थि के अन्तःस्राव से सहायता पहुँचती है। थायरायड ग्रन्थि के स्राव से यकृत-सचित ग्लाईकोजह का रूपान्तर ग्लूकोज मे होता है। अर्थात् इसके अन्तःस्राव से रक्त-शर्करा मे वृद्धि होती है।

५. मूत्र-शर्करा एवं रक्त-शर्करा की उत्पत्ति

१. मूत्र-शर्करा को उत्पत्ति

साधारणतः स्वस्थ व्यक्ति के रक्त मे ७०-१२० मिलिग्राम प्रतिशत रक्त-शर्करा होती है। प्रात.काल कुछ खाने-पीने के पूर्व विद्यमान शर्करा को निराहार रक्त-शर्करा (Fasting Blood Sugar) कहते है। निराहार रक्त-शर्करा ७० मिलिग्राम प्रतिशत से कम और १२० मिलिग्राम प्रतिशत से अधिक नही होनी चाहिए।

भोजन के उपरान्त प्रत्येक व्यक्ति की रक्त-शर्करा मे स्वाभाविक तौर पर वृद्धि होती है, जिसकी मात्रा १२०-१६० मिलिग्राम प्रतिशत तक हो सकती है। अधिक मिष्टान्न सेवन से इसकी मात्रा अधिक-से-अधिक १८० मिलिग्राम प्रतिशत तक होने की संभावना रहती है। लेकिन यह स्थिति एक से तीन घंटे तक रह सकती है। इस अवधि मे ५० से ८० मिलिग्राम प्रतिशत रक्त-शर्करा या ग्लूकोज इनसुलिन की सहायता से मुख्यत यकृत एव पेशियो मे सचित हो जाता है। संचय-क्रिया व्यवस्थित रूप से समाप्त होने पर रक्त-शर्करा पुनः ७०-१२० मिलिग्राम प्रतिशत हो जाती है।

वृक्क सहनीय मर्यादा (Renal Threshold)

भोजन के तुरन्त बाद रक्त-शर्करा की मात्रा १६०–१८० मिलिग्राम प्रतिशत होने पर इसका दबाव या बोझ वृक्क पर भी पड़ता है। लेकिन वृक्क की सहनीय मर्यादा १६० से १८० मिलिग्राम प्रतिशत रक्त-शर्करा है अर्थात् रक्त मे १६०–१८० मिलिग्राम प्रतिशत शर्करा होने पर भी बढ़ी हुई रक्त-शर्करा को वृक्क मूत्र-मार्ग से बाहर नही जाने देता। इतनी रक्त-शर्करा का दबाव या बोझ वह सहन करने मे समर्थ होता है। इसीको

वृक्क सहनीय मर्यादा कहते हैं। रक्त-शर्करा की सुरक्षा की दृष्टि से इसका अत्यन्त महत्त्व है।

आहार-सम्बन्धी त्रुटियों के कारण अग्न्याशय अन्तःस्राव इनसुलिन की न्यूनता होने पर शर्करा के संचय एवं जलन दोनों कार्यों में बाधा होती है। इस स्थिति में भोजन के पश्चात् रक्त-शर्करा की मात्रा १८० मिलिग्राम प्रतिशत से भी अधिक हो जाती है। यह परिमाण वृक्क सहनीय मर्यादा की अपेक्षा अधिक होने के कारण अतिरिक्त रक्त-शर्करा मूत्र-मार्ग में उत्सर्ग होने लगती है। इसीको मधुमेह कहते हैं।

मधुमेह-रोग की प्रारम्भिक अवस्था में इनसुलिन की कमी अल्प मात्रा में होने के कारण केवल भोजन के पश्चात् मूत्र में शर्करा पायी जाती है। इसकी मात्रा लेशमात्र (Trace) या ०·३% से ०·६% तक हो सकती है। उस समय निराहार अवस्था की मूत्र-शर्करा शून्य रहती है। परन्तु क्रमशः रोग-वृद्धि होने पर जब रक्त-शर्करा की मात्रा वृक्क मर्यादा से सदैव अधिक रहने लगती है, तब तो निराहार अवस्था के मूत्र में भी शर्करा पायी जाती है।

मूत्र-शर्करा का परिमाण : सौम्य मधुमेह-रोग में मूत्र-शर्करा ½% से २% एवं तीव्र अवस्था में ५% से १०% तक हो सकती है। भोजन के पश्चात् रक्त-शर्करा में स्वाभाविक वृद्धि होने के कारण भोजनोत्तर मूत्र-शर्करा निराहार मूत्र-शर्करा की अपेक्षा हमेशा अधिक होती है। सामान्यतः जाँच के लिए निराहार मूत्र का ही उपयोग किया जाता है। निराहार मूत्र-शर्करा शंकास्पद होने पर ही शंका-समाधान के लिए भोजनोत्तर मूत्र-शर्करा की जाँच की जाती है।

इस प्रकार प्रारम्भ में मधुमेह रोगी के केवल मूत्र में शर्करा पायी जाती है और रक्त-शर्करा स्वाभाविक परिमाण में ७०–१२० मिलिग्राम प्रतिशत के अन्तर्गत रहती है। अर्थात् निराहार रक्त में शर्करा का आधिक्य नहीं होता।

२. रक्त-शर्करा की उत्पत्ति

ऊपर के अनुसार मधुमेह-रोग की प्रारम्भिक अवस्था मे वृक्क रक्त की अतिरिक्त शर्करा को मूत्र-मार्ग से पूर्णतः बाहर निकालकर उसको स्वाभाविक स्तर पर लाने मे समर्थ होता है।

शर्करा-जातीय (कार्बोहाइड्रेट-श्वेतसार) तथा स्निग्ध पदार्थो का सेवन अधिक मात्रा मे करने से अग्न्याशय को अधिक श्रम करना पड़ता है। निरन्तर अतिश्रम के कारण दुर्बल अग्न्याशय की लैंगरहैन्स द्वीपिकाओं का ह्रास होता है, उनकी संख्या मे कमी होने लगती है। फलतः उनके स्राव इनसुलिन मे भी कमी हो जाती है। इनसुलिन की न्यूनता के कारण रक्त-शर्करा मे तेजी से वृद्धि होने लगती है। वृक्क यथाशक्ति रक्त की इस अतिरिक्त शर्करा को बाहर निकालने का प्रयत्न करता है, फिर भी रक्त मे शर्करा का परिमाण स्वाभाविक मात्रा (७०-१२० मिलिग्राम प्रतिशत) की अपेक्षा अधिक रहने लगता है।

शक्ति एवं ऊर्जा का स्रोत शर्करा का जब इस प्रकार मूत्र द्वारा बाहर निकलकर अपव्यय होने लगता है, तब उसकी पूर्ति के लिए शरीर खाद्य-पदार्थो से पुनः शर्करा निर्माण करता है, जिससे रक्त की शर्करा मे वृद्धि होती है। रक्त मे शर्करा की वृद्धि के फलस्वरूप उसकी अम्लता मे भी वृद्धि होती है।

दूसरी ओर रक्त मे पर्याप्त शर्करा होते हुए भी इनसुलिन की कमी के कारण शरीर उसका उपयोग नही कर पाता। इस प्रकार शरीर मे शर्करा का कृत्रिम अभाव उत्पन्न हो जाता है, जिससे रक्त के स्नेह द्रव्यो का ज्वलन (Oxidation) भी पूर्णतः नही हो पाता और रक्त मे अम्ल द्रव्य सचित होने लगते है। रक्ताम्लता के कारण लैंगरहैन्स की द्वीपिकाओ का ह्रास होता है, जिसके परिणामस्वरूप शरीर मे इनसुलिन की न्यूनता उत्पन्न होती है।

उपर्युक्त दीर्घकालीन दोषयुक्त आहार एवं इनसुलिन की कमी के कारण रक्त-शर्करा मे तीव्र गति से वृद्धि होती है। तब मूत्र द्वारा अधिक मात्रा मे (८% से १०% तक) शर्करा बाहर निकालने पर भी रक्त-शर्करा पुनः स्वाभाविक स्तर पर नही आती। इस प्रकार रक्तातिशर्करा की बीमारी शुरू होती है।

रक्तातिशर्करा की सौम्यावस्था मे निराहार रक्त-शर्करा वृक्क सहनीय मर्यादा (१६०-१८० मिलिग्राम प्रतिशत) से कम एवं स्वाभाविक रक्त-शर्करा से अधिक रहती है। लेकिन रोग-वृद्धि होने पर निराहार रक्त-शर्करा वृक्क सहनीय मर्यादा का अतिक्रमण करके ४०० से ५०० मिलिग्राम प्रतिशत तक बढ़ जाती है। हमारे चिकित्सालय मे एक रोगी की निराहार रक्त-शर्करा ४५९ मिलिग्राम प्रतिशत एवं मूत्र-शर्करा ४% से ६% तक थी। इसकी चिकित्सा का विस्तृत वर्णन रोगी के उदाहरण नामक प्रकरण मे किया गया है।

३. वृक्क सहनीय मर्यादा की वृद्धि

(Increase in Renal Threshold)

कभी-कभी ऐसे रोगी भी देखने मे आते है, जिनकी निराहार रक्त-शर्करा वृक्क सहनीय मर्यादा से अधिक, २००-३०० मिलिग्राम प्रतिशत होते हुए भी मूत्र मे शर्करा का उत्सर्ग बिलकुल नही होता। भोजन के उपरान्त भी शर्करा उत्सर्ग अल्पमात्रा मे होता है। इसका कारण यह है कि मूत्र-मार्ग द्वारा तथाकथित शर्करा के अपव्यय को बचाने के लिए वृक्क अपनी सहनीय मर्यादा बढाकर २०० से ३०० मिलिग्राम प्रतिशत तक कर सकता है। लेकिन सच बात तो यह है कि दीर्घकालीन रक्तातिशर्करा के कारण वृक्क मे सूजन, दुर्बलता आदि दोष उत्पन्न हो जाते है। दीर्घकालीन मधुमेह मे प्राय. धमनी-जरठता (Arterio-Sclerosis) रोग उत्पन्न होने के कारण वृक्क सहनीय मर्यादा मे वृद्धि होती है। लम्बी

अवधि तक रक्तातिशर्करा से पीड़ित प्रौढ आयु के रोगियो में यह विकृति विशेष रूप से पायी जाती है। ऐसे मधुमेहियों को उच्च रक्तचाप (High Blood Pressure) होने की सम्भावना बढ जाती है। यह रक्तातिशर्करा की कष्टसाध्य अवस्था है। स्वाभाविक वृक्क सहनीय मर्यादावाले रोगी इनकी अपेक्षा अल्प अवधि मे अच्छे होते हैं।

मधुमेह निश्चेतनता (Diabetic Coma) की स्थिति मे रक्त-शर्करा ८०० से १००० मिलिग्राम प्रतिशत तक एव मूत्र-शर्करा १०% तक हो सकती है।

साधारण तौर पर चार प्रकार के मधुमेही हो सकते है :

१. जिनकी रक्त-शर्करा स्वाभाविक मात्रा मे रहती है, परन्तु मूत्र मे शर्करा होती है।

२ जिनकी रक्त-शर्करा की मात्रा स्वाभाविक रक्त-शर्करा से अधिक, किन्तु वृक्क सहनीय मर्यादा से कम होती है तथा मूत्र मे शर्करा रहती है। इनकी चिकित्सा प्रथम वर्ग के रोगियो की अपेक्षा कुछ कठिन होते हुए भी सरल होती है।

३ जिनकी रक्त-शर्करा की मात्रा वृक्क सहनीय मर्यादा से अधिक तथा मूत्र भी शर्करा-युक्त होता है। इनकी वृक्क सहनीय मर्यादा स्वाभाविक रहती है। ये रोगी उपर्युक्त दोनो वर्गो की अपैक्षा कष्टसाध्य होते है, लेकिन योग्य चिकित्सा एव पथ्य से लम्बी अवधि मे ही क्यो न हो, इनको लाभ होता है और ये रोगमुक्त हो सकते है।

४. जिनकी रक्त-शर्करा वृक्क सहनीय मर्यादा से अधिक होती है, परन्तु उच्च वृक्क सहनीय मर्यादा के कारण मूत्र शर्करा-शून्य रहता है। ऐसे रोगी कष्टसाध्य होते है।

रक्त-शर्करावाले रोगियों मे जब स्नेह का उपापचय (Metabolism) विकृत होकर रक्त के कोलेस्टेरोल (Cholesterol), डायसेटिक-अम्ल (Diacetic-Acid) एवं एसीटोन (Acetone) अम्ल आदि दूषित द्रव्य

एकत्र होने लगते है, तब चिकित्सा-समस्या और जटिल हो जाती है। मधुमेह-रोगियो मे रक्तगत शर्करा-आधिक्य की अपेक्षा रक्तगत वसा (स्नेह) की अधिकता ज्यादा चिंताजनक एवं घातक स्थिति उत्पन्न करती है और रोग को असाध्य कोटि मे पहुँचा देती है। •

६. मधुमेह रोग के महत्त्वपूर्ण लक्षण

मूत्र मे थोडी-सी (Trace) शर्करा होने पर उसका सहसा पता चलना कठिन होता है, लेकिन बार-बार पेशाब होना, पेशाब किये हुए स्थान या बर्तन मे चीटे जमा होने पर मधुमेह की शंका करनी चाहिए। रोग की सौम्यावस्था मे मूत्र-त्याग के पश्चात् कपड़ो या जूतो पर मूत्रगत शर्करा के दाग भी पाये जाते है।

उपर्युक्त लक्षण सभी रोगियो पर समान रूप से लागू नही होते। उत्तरावस्था के कई रोगियो को आकस्मिक मूत्र-परीक्षण से ही इस रोग का पहले-पहल ज्ञान होता है। मूत्र मे मीठी खुशबू का आना उसमे शर्करा होने का महत्त्वपूर्ण लक्षण है। रोग बढने पर मूत्र का रंग चीनी के शर्बत जैसा प्रतीत होता है।

१. **तृषाधिक्य :** मधुमेह-रोग मे इस लक्षण का अत्यन्त महत्त्व है। मूत्र-शर्करा वृद्धि के अनुपात मे तृषा या प्यास मे भी वृद्धि होती है। रक्त को शुद्ध एवं लघु (हल्का) बनाने के लिए शरीर स्वाभाविक तौर पर अधिक पानी की माँग करता है, ताकि पानी के साथ अतिरिक्त रक्त-शर्करा घुलकर मूत्र द्वारा आसानी से बाहर निकल जाय। मूत्र-मात्रा की न्यूनाधिकता के अनुसार तृषा मे कमी या वृद्धि होगी। सामान्यतः मधुमेह-रोगी को हमेशा प्यास लगती है, परन्तु भोजन के पश्चात् एक-दो

घंटे तक उसकी अधिकता रहती है। क्योकि उस समय रक्त-शर्करा की मात्रा मे काफी वृद्धि हो जाती है। रोग अधिक बढने पर जीभ की रूक्षता बढती है, जिससे प्यास सतत बनी रहती है।

२. **बहुमूत्र** (Polyuria) : यह मधुमेह का सामान्य, लेकिन महत्त्वपूर्ण लक्षण है। साधारण तौर पर स्वस्थ व्यक्ति को प्रतिदिन २४ घंटे मे १। से १॥ लीटर तक पेशाब होता है। ऋतु के अनुसार या आहार मे ठोस या तरल पदार्थ की अधिकता के अनुपात मे मूत्र के परिमाण मे परिवर्तन होता है, तथापि सर्वसाधारण आहार-विहार की स्थिति मे, २४ घटे मे २-२। लीटर से अधिक पेशाव होने पर उसको वहुमूत्र की स्थिति मानना चाहिए। रोग-वृद्धि की अवस्था मे २४ घटे की मूत्र-मात्रा १० से १२ लीटर तक हो सकती है। कभी-कभी असामान्य रोगियो मे यह मात्रा और भी अधिक पायी जाती है।

३. **क्षुधाधिक्य** : मधुमेह का यह अत्यन्त महत्त्वपूर्ण लक्षण है। भरपेट भोजन करने के थोडी देर (दो या तीन घटे) वाद फिर भूख लगना, यह लक्षण मधुमेह-रोग के अधिक बढ़ने पर ही प्रकट होता है। प्रचुर मात्रा मे आहार करने पर भी इनसुलिन के अभाव मे उससे शरीर को शक्ति या उष्णता नही मिलती। अधिकांश पोषक तत्त्वो का शर्करा के रूप मे मूत्र-मार्ग से बाहर निकलकर अपव्यय होता है। शक्ति या उष्णता के अभाव मे दुर्बलता के कारण रोगी को हमेशा भूख लगती रहती है। भोजन करने पर भी रोगी की अवस्था अल्पाहारी जैसी रहती है।

उपर्युक्त लक्षण गभीर परिणामो का सूचक माना जाता है, क्योकि खाद्य-पदार्थो से निर्मित शर्करा रक्त मे मिलकर रक्त-शर्करा की मात्रा को बढ़ाती है। मूत्र के साथ निकलनेवाली शर्करा की मात्रा खाद्य-पदार्थो के द्वारा तैयार होनेवाली शर्करा की तुलना मे नगण्य होती है। इसलिए रक्त-शर्करा मे तीव्रगति से वृद्धि होने लगती है।

४. कृशता एवं दुर्बलता : युवावस्था मे मधुमेह होने पर यह लक्षण विशेष रूप मे प्रकट होता है। बहुमूत्रता एवं मूत्र-शर्करा की अधिकता का कृशता एवं दुर्बलता से निकट का सम्बन्ध है। अत्यधिक मात्रा मे भोजन करने पर भी मूत्र द्वारा अधिक शर्करा उत्सर्ग होने के कारण रोगी क्रमशः कृश एव दुर्बल होता जाता है। अधिक उम्रवाले रोगियो मे यह लक्षण बहुत कम पाया जाता है।

५ त्वचा की रुक्षता : बहुमूत्र के कारण शरीर का अधिकाश जलीय भाग बाहर निकल जाता है इसलिए जलतत्त्व की कमी के कारण त्वचा प्रायः शुष्क तथा रुक्ष रहती है। थोड़े घर्षण या चोट से चमडी छिल जाती है। रक्तातिशर्करा से रक्त की अम्लता मे वृद्धि होती है। फलतः मामूली चोट लगने पर शीघ्र अच्छी नही होती और पकने लगती है। छोटा-सा व्रण एक बड़े फोडे का निमित्त बन जाता है, जिसे कार्बंकल (Carbuncle) कहते हैं।

६. गुह्यांग-कुण्डु (Pruritus Pudendi) : गुप्त स्थानो (Private Parts) मे कण्डु (खुजलाहट) का लक्षण अनेक रोगियो मे प्रारम्भ से ही पाया जाता है। पुरुषों की अपेक्षा स्त्रियों मे यह लक्षण विशेष रूप से मिलता है।

७. कब्ज : यह लक्षण साधारणतया पुराने रोगियो मे पाया जाता है। ऐसे रोगियो का पेट साफ रखना नितान्त आवश्यक है। आहार-परिवर्तन के द्वारा आँतो को साफ रखना चाहिए, तथापि आवश्यकता-नुसार एनिमा का प्रयोग भी किया जा सकता है।

८ मूत्र का आपेक्षिक गुरुत्व (Specific gravity) **मे वृद्धि :** मधुमेही-रोगी का मूत्र सामान्यतः स्वाभाविक मूत्र की अपेक्षा गाढा एवं भारी होता है। स्वस्थ व्यक्ति के मूत्र का आपेक्षिक गुरुत्व १००५ से १०३० तक होता है, लेकिन इस रोग मे यह बढकर १०५० तक भी हो जाता है। मूत्र-शर्करा मात्रा के अनुपात मे उसके आपेक्षिक गुरुत्व एवं मीठी खुशबू (Sweet odour) मे वृद्धि होती है। ●

७. मधुमेही के कष्टसाध्य उपद्रव

१ कार्बंकल (Carbuncle)

मधुमेही के रोगी को बडा फोड़ा (Abscess) या व्रण होने पर उसको कार्बंकल कहते है। साधारणतया मासल अंग, जैसे जाँघ, नितम्ब, (चूतड़), पीठ आदि स्थान इसकी वृद्धि के लिए अधिक उपयुक्त होते है। मधुमेही रोगी का रक्त-शर्करा एवं अम्लजातीय द्रव्यो से युक्त होने के कारण ये फोड़े शीघ्र बढने लगते है, जल्दी अच्छे नही होते। वैसे मधुमेही रोगी को मामूली चोट लगने या छोटा-सा घाव होने पर भी वह तीव्र गति से बढता है। हमने अपने चिकित्सालय मे संतरे के आकार के कार्बंकल की चिकित्सा सफलतापूर्वक की है। इसका वर्णन रोगी उदाहरण—१ मे किया गया है।

२. गेंग्रीन (Gangrene)

यह उपद्रव रक्तवाहिनियो के अपविकास (Degeneration) के कारण होता है। दीर्घकालीन मधुमेह-रोग से पीड़ित वयोवृद्ध रोगियो मे यह विशेष रूप से पाया जाता है। उनकी रक्तवाहिनियो मे कड़ापन भी आने लगता है।

प्रारम्भ मे अपविकास का दुष्परिणाम हृदय से दूर रहनेवाली पैर की उँगलियो की सूक्ष्म कोशिकाओ पर होता है और वे कठिन होने लगती है। कड़ेपन एवं संकोच के कारण उनमे रक्त-सचार अल्पमात्रा मे होने लगता है, रोग-वृद्धि के साथ-साथ त्वचा से सम्बद्ध ज्ञान-तन्तुओ मे भी दोष उत्पन्न होता है, जिनसे स्पर्श, शीतोष्ण-संवेदना, पीड़ा आदि की अनुभूति ठीक तरह नही होती। तत्पश्चात् धीरे-धीरे उन स्थानो मे संज्ञा-शून्यता आने लगती है। रोगाक्रात स्थान शुरू मे नीला-हरा, बाद मे

भूरा या ताँबे के रंग का हो जाता है और अन्त मे वहाँ सडान पैदा होती है। गैंग्रीन की अतिविकसित अवस्था मे सुरक्षा की दृष्टि से रोग-ग्रसित अंग को काटकर शरीर से अलग करना पडता है।

३. मधुमेह-निश्चेतनता

मधुमेह-रोग मे यह सबसे महत्त्वपूर्ण एव घातक उपद्रव है। प्रायः कष्टसाध्य या असाध्य रोगियो मे यह लक्षण पाया जाता है। कब्ज, अपचन, आहार मे आकस्मिक परिवर्तन, अतिश्रम, शल्यक्रिया आदि इसकी उत्पत्ति मे कारणीभूत हो सकते है।

इनसुलिन के अभाव मे शर्करा के उपयोग मे वाधा होने पर स्नेह उपापचय (Fat Metabolism) मे भी दोष उत्पन्न होता है। इसके परिणामस्वरूप रक्त मे डायसिटिक अम्ल (Diacetic Acid) एकत्र होने लगता है। यह अम्ल, रक्त तथा कोषो के स्थायी क्षारीय द्रव्यो (Fixed Bases) को अपने साथ मिलाकर मूत्र-मार्ग से बाहर निकाल देता है, जो शरीर के लिए अत्यन्त उपयोगी होते है। इनकी कमी से रक्त की अम्लता मे तीव्रता से वृद्धि होती है। प्रारम्भ मे मूत्र से केवल एसीटोन (Acetone), तदनन्तर डायसिटिक अम्ल का उत्सर्ग होता है। अत्यन्त गम्भीर अवस्था मे बी० हाइड्रोक्सीब्युट्रिक अम्ल (B. Hydroxy butyric Acid) भी मूत्र के साथ वाहर निकलने लगता है। इस प्रकार रक्ताम्लता की अतिवृद्धि होने पर मधुमेह-निश्चेतनता की सम्भावना रहती है। सक्षेप मे मधुमेह-निश्चेतनता अम्लोत्कर्ष की स्थिति (Acidosis) मे उत्पन्न होती है।

मधुमेह-निश्चेतनता के पूर्व अपचन, कब्ज, पेट-दर्द, बेचैनी, खिन्नता आदि लक्षण दिखाई देते है। उस समय सिर मे दर्द होता है, नाड़ी तेज चलती है, रक्तचाप कम (Low Blood Pressure) हो जाता है। शरीर का तापमान स्वाभाविक से कम रहता है, समस्त पेशियाँ शक्ति-शून्य हो जाती है। नेत्र-गोलक (Eye Ball) अन्दर की ओर धँसने

लगते है, होठ एवं जीभ मे रुक्षता आ जाती है। श्वसन की शुष्कता के कारण उसमे विशिष्ट प्रकार की गन्ध आती है।

वसा की ज्वलन-क्रिया के फलस्वरूप कीटोन (Ketone) नामक दूषित द्रव्य शेष बच जाता है। स्वाभाविक अवस्था मे वह एसीटोन मे परिवर्तित होकर मूत्र द्वारा शरीर से बाहर निकल जाता है। लेकिन वसा के सदोष उपापचय (Metabolism) के कारण कीटोन का रूपान्तर एसीटोन मे नही हो पाता और वह रक्त-वाहिनियो मे ही रह जाता है। कीटोन का धर्म है कि वह कार्बन-डायोक्साइड को अपने मे खीचकर मिला लेती है। इसलिए कीटोन द्रव्य की वृद्धि के साथ-साथ शरीर मे आक्सीजन की कमी होने लगती है। इसके साथ-साथ फेफड़ो की कार्य-शक्ति ६० से ८०% तक घट जाती है। इस क्षति-पूर्ति के लिए श्वसन-क्रिया मे वृद्धि होती है। इसलिए निश्चेतनता की अवस्था मे रोगी जोर-जोर से साँस लेने का प्रयत्न करता है। कभी-कभी शक्तिहीनता के कारण बीच-बीच मे श्वसन की गति धीमी भी हो जाती है।

निश्चेतनता की गम्भीर अवस्था मे रोगी साँस लेते समय अपना मुँह अधिकाधिक खोलने का प्रयत्न करता है, जिसके कारण उसका सिर पीछे की ओर झुकने लगता है। श्वास छोडते समय सिर पुन धीमे-धीमे आगे की ओर आने लगता है। निश्वसन (Expiration) पूर्ण होने पर थोड़ी देर के लिए श्वसन-क्रिया बन्द हो जाती है। इसके पश्चात् पुनः साँस लेने की क्रिया उपर्युक्त विधि से प्रारम्भ हो जाती है।

प्रायः बेहोशी से ही मधुमेह-निश्चेतनता का आरम्भ होता है, लेकिन कभी-कभी बेहोशी, उपद्रव शुरू होने के बाद देर से आती है। निश्चेतनता के साथ ऑक्सीजन का अभाव उत्पन्न होने पर प्रायः ४८ घटे के अंदर रोगी की मृत्यु हो जाती है।

८. चिकित्सा-क्रम की योजना

मधुमेह आहार उपापचय (Metabolism) सम्बन्धी विकृति का परिणाम है, जिससे रक्त मे शर्करा की अधिकता हो जाती है। रक्त मे शर्करा के आधिक्य से उसकी अम्लता मे वृद्धि होती है, जो रोग-वृद्धि के साथ-साथ उत्तरोत्तर बढती जाती है।

रक्तातिशर्करा उत्पन्न होने के पश्चात् जब वसा का उपापचय दोषपूर्ण रहता है, तब रोगियो की रक्ताम्लता मे तीव्र गति से वृद्धि होती है, जिससे मूत्र मे एसीटोन, डायसिटिक, कीटोन आदि अम्ल पाये जाते है। यह घातक परिणामो की पूर्वसूचना है।

अतएव मधुमेह-चिकित्सा की दृष्टि से निम्न बातो पर ध्यान देना नितान्त आवश्यक है :

१ रोग की साध्यासाध्यता का अवलोकन, २ रक्त-शर्करा एवं मूत्र-शर्करा को निर्मूल करना, ३. मधुमेह मे वर्जित खाद्य-पदार्थ, ४. मधुमेह-रोग मे पथ्य, ५. आहार-निर्देशक सुझाव, ६ चिकित्सा-काल मे वजन और ७. बाह्य उपचार।

१. रोग की साध्यासाध्यता का अवलोकन

चिकित्सा प्रारम्भ करने के पूर्व सर्वप्रथम निम्न बातो पर ध्यान देना जरूरी है :

(अ) रक्त एव मूत्र का ताजा विवरण प्राप्त करना चाहिए, ताकि रोग की वर्तमान अवस्था की सौम्यता या गंभीरता का ठीक-ठीक अनुमान लग सके और तदनुरूप चिकित्सा की जा सके।

(आ) **पूर्व इतिहास : १.** रोगी के पूर्व इतिहास से अगर यह प्रकट

होता है कि उसका रोग आनुवंशिक है तथा वह अल्पायु मे रोगाक्रांत हुआ था और रोग की वृद्धि भी तीव्र गति से हुई है तो समझना चाहिए कि वह रोग कष्टसाध्य है।

२. जिन रोगियो को आहार, परिश्रम तथा व्यवसाय-सम्बन्धी दोषपूर्ण आदतो के कारण ३५-४० वर्ष की आयु मे या उत्तरआयु मे यह रोग हुआ है, उन पर आहार-विहार-सम्बन्धी नियंत्रण का शीघ्र परिणाम होता है। इनकी चिकित्सा अल्पायु या आनुवंशिक रोगियो की अपेक्षा सरल है।

३. **स्थूलता एव कृशता :** मधुमेह-रोगी प्राय. दो प्रकार के होते हैं— स्थूल एवं कृश। स्थूल रोगी हृष्ट-पुष्ट एवं अधिक उम्रवाले होते है, इनमे क्षुधा तथा तृषाधिक्य या बहुमूत्र के लक्षण कम मिलते हैं। ऐसे रोगी आहार-विहार के नियत्रण तथा जल एवं मिट्टी के उपचार से अल्प अवधि मे रोग-मुक्त हो जाते हैं।

कृश मधुमेह के रोगी प्रायः कम उम्रवाले होते है, जिनमे तृषा, क्षुधा तथा बहुमूत्रता के तीव्र लक्षण पाये जाते है। ऐसे रोगियो की चिकित्सा कष्टसाध्य मानी जाती है।

४. **वसा उपापचय-सम्बन्धी रक्तदोष :** जीर्ण मधुमेह-रोगियो मे वसा उपापचय-सम्बन्धी बाधा के फलस्वरूप रक्त मे कोलेस्टेरोल (Cholesterol) की मात्रा स्वाभाविक २०० मिलिग्राम से अधिक (कभी-कभी ४०० मिलिग्राम तक) हो जाती है। स्वस्थ व्यक्ति मे स्नेह की मात्रा ० ६ से ० ८% तक होती है, लेकिन मधुमेह-रोग मे इसकी मात्रा और भी अधिक हो सकती है। मधुमेह-निश्चेतनता मे यह मात्रा २०% तक रहती है। उपर्युक्त कारणो से रक्त मे वसा की अधिकता भविष्य मे अत्यन्त घातक सिद्ध होती है।

५. **वसा उपापचय-सबंधी मूत्रदोष :** मूत्र-परीक्षण मे एसीटोन, डायसिटिक, कीटोन आदि अम्लो का होना घातक लक्षणो का द्योतक है।

६. उच्च वृक्क सहनीय मर्यादा (High Renal Threshold) : स्वाभाविक वृक्क सहनीय मर्यादावाले रोगी की रक्तातिशर्करा शीघ्र कम होती है, क्योंकि स्वस्थ वृक्क अतिरिक्त रक्त-शर्करा को मूत्र के साथ बाहर निकालकर उसके स्तर को कम करके स्वाभाविक स्तर पर लाने के लिए सतत प्रयत्नशील रहता है। इस प्रकार स्वस्थ वृक्क रक्तातिशर्करा को दूर करने मे काफी सहायता पहुँचाता है।

इसके विपरीत उच्च वृक्क सहनीय मर्यादावाले रोगियों की रक्त-शर्करा को स्वाभाविक स्तर पर लाने मे बाधक होता है। वृक्क भी अपनी सहनीय मर्यादा से अधिक रक्त-शर्करा को मूत्र मार्ग द्वारा बाहर निकालने मे सहयोग देता है, लेकिन जब रक्त-शर्करा की मात्रा उसकी मर्यादा के अन्तर्गत आ जाती है, तब वह अतिरिक्त रक्त-शर्करा को बाहर निकालने में असमर्थ रहता है।

उदाहरण के लिए, एक रोगी की वृक्क सहनीय मर्यादा २२० मिलिग्राम रक्त-शर्करा है। जब तक रक्त-शर्करा की मात्रा २२० मिलिग्राम से अधिक रहेगी, तब तक वृक्क उसको मूत्र द्वारा बाहर निकालकर रक्त-शर्करा कम करने मे सहायक होगा। लेकिन २२० मिलिग्राम रक्त-शर्करा (जो स्वाभाविक से अधिक है) होने की अवस्था मे मूत्र द्वारा शर्करा का उत्सर्ग नही होगा। इस प्रकार उच्च सहनीय मर्यादायुक्त वृक्क अपनी मर्यादा से निम्न रक्तातिशर्करा को कम करने मे बाधक होता है। ऐसे पुराने हठीले मधुमेह-रोग मे जब तक वृक्क का दोष दूर नही होता, (अर्थात् वृक्क की सहनीय मर्यादा स्वाभाविक नही हो जाती) तब तक रक्त-शर्करा स्वाभाविक स्तर (७०–१२० मिलिग्राम) पर नही आ सकती।

७. अन्य रोग : उपर्युक्त उच्च वृक्क सहनीय मर्यादावाले अति जीर्ण-रोगियो को मधुमेह के अलावा धमनी-जरठता (Sclerosis), उच्च रक्तचाप, संधिवात आदि अन्य रोग होने पर चिकित्सा मे समस्या पैदा

होती है। ऐसे रोगियो की चिकित्सा कष्टसाध्य एवं दीर्घकालीन होती है।

मधुमेह के साथ तपेदिक होने पर वह असाध्य कोटि का रोग माना जाता है। स्त्रियो मे गर्भधारण के समय मधुमेह का होना भी प्राणघातक है।

२. रक्त-शर्करा एव मूत्र-शर्करा को निर्मूल करना

आहार-नियत्रण ही मधुमेह-चिकित्सा का प्रधान उपाय है। इनसुलिन तो केवल रोग को काबू मे रखने के लिए एक अच्छा साधन है, लेकिन रोग-मुक्ति की दृष्टि से आहार-विहार का नियत्रण एव परिवर्तन अत्यावश्यक है। आहार निर्धारित करते समय रोगी की शक्ति, आयु, रोगावस्था तथा उसकी अवधि आदि का ध्यान रखना चाहिए।

३ मधुमेह मे वर्जित खाद्य-पदार्थ

१ **कार्बोहाइड्रेट :** वृद्धिगत रक्त-शर्करा को कम करने का सरल उपाय यह है कि सर्वप्रथम कार्बोहाइड्रेट (जैसे—चावल, गेहूँ, ज्वार, बाजरा, आलू, शकरकद, फलो मे केला आदि) खाद्य-पदार्थो को रोगी की शक्ति तथा स्थिति देखकर क्रमशः या शुरू से ही बंद कर दिया जाय।

इससे रक्त-शर्करा कम होगी तथा मूत्र-शर्करा भी क्रमशः कम होकर शून्य हो जाती है। सौम्य रोगियो मे इसका परिणाम अल्प अवधि मे अर्थात् १०–१५ दिन मे ही दिखाई देता है।

२. **प्रोटीन :** कार्बोहाइड्रेट खाद्य-पदार्थो के बन्द करने से भी रक्त एवं मूत्र-शर्करा मे परिवर्तन न होने पर प्रोटीन जातीय खाद्य-पदार्थो को भी कुछ समय के लिए जब तक रक्त एवं मूत्र दोनो मे सन्तोषजनक सुधार न हो जाय, बन्द रखना चाहिए। क्योकि विशेषकर पुराने रोगियों मे प्रोटीन का ५८% भाग शर्करा मे परिवर्तित होकर रक्त-शर्करा बढाने मे सहायक होता है।

इस अवस्था मे मूँग या अन्य कोई दाल या उसके सूप का भी उपयोग नही करना चाहिए। इसके अतिरिक्त दूध, दही एवं उससे बनी हुई वस्तुओ से भी रोगी को बचाना चाहिए।

ऐसा करने पर दो सप्ताह के भीतर रोगी की रक्त एवं मूत्र-शर्करा मे निश्चित रूप से अन्तर दिखाई देगा। इसके पश्चात् रोगी को मक्खन-रहित छाछ या दूध देना चाहिए, ताकि उसकी शक्ति क्षीण न होने पाये।

३ **वसा :** साधारणतया वसा पचने मे गरिष्ठ होने के कारण एवं उससे रक्त की अम्लता मे वृद्धि होने की आशंका से प्रारम्भ से ही उसका उपयोग न करना हितकर है। ऐसा करने पर साधारण रोगियो को भी शीघ्र लाभ होता है।

उपर्युक्त कार्बोहाइड्रेट, प्रोटीन एव वसा आदि खाद्य-पदार्थो को अनिश्चित काल के लिए बन्द रखना घातक होता है। सुधार के निश्चित लक्षण प्रकट होते ही अन्न तथा मक्खन-रहित दूध, या छाछ भी देना चाहिए।

४. मधुमेह-रोग में पथ्य

कार्बोहाइड्रेट, प्रोटीन, वसायुक्त आहार बन्द करने के साथ-साथ रोगी को पोषण की दृष्टि से क्षारधर्मीय खाद्य-पदार्थो का सेवन करना चाहिए, जिससे उसकी रक्त या मूत्र-शर्करा मे वृद्धि न होने पाये। इस दृष्टि से निम्न क्षारधर्मीय खाद्य-पदार्थ अत्यन्त उपयोगी है :

१ **कच्ची साग-भाजी :** (अ) साग—ककड़ी, खीरा, गाजर, मूली, टमाटर आदि।

(आ) भाजी—धनिया, चौलाई, पालक, मेथी, पत्तागोभी, लेटव्हीस आदि।

२ **पक्की साग-भाजी :**—लौकी, परवल, तरोई, गलका, करेला, भिण्डी, टिण्डा आदि एवं सभी प्रकार की पत्ती भाजियाँ।

३ **ताजे फल :** जामुन, नीबू (सभी प्रकार के), संतरा, अमरूद, अनार, नाशपाती, सेव, पका करौंदा, अनानास आदि।

४. **सूखे फल** (Dry Fruit) : जर्दालू, कालीद्राक्ष, किशमिश आदि।

दैनिक आहार मे कच्ची साग-भाजियो की मात्रा धीरे-धीरे बढानी चाहिए, ताकि पाचन-क्रिया मे कोई गडबडी न हो। इनका उचित परिमाण मे सेवन करने से कब्ज की शिकायत दूर होती है तथा शरीर को विटामिन एवं अन्य क्षार-तत्त्व प्रचुर मात्रा मे मिलते हैं।

फलों की मात्रा मे थोडी छूट रखी जा सकती है, लेकिन प्रधानता तथा झुकाव कम मीठे फलो की तरफ होना चाहिए, ताकि रक्त-शर्करा मे वृद्धि न होने पाये। मोसम्मी अत्यन्त मधुर होने के कारण उसमे यह दोष पाया जाता है। इस दृष्टि से जामुन, संतरा, नाशपाती, अमरूद अधिक उपयुक्त हैं। फलो के अभाव मे ककडी, गाजर, टमाटर, आदि का सेवन किया जा सकता है। सूखे फलों मे जर्दालू एवं अंजीर भी हितकर हैं, लेकिन इनका उपयोग चिकित्सा के प्रारम्भ-काल मे किया जाय।

५ आहार-निर्देशक सुझाव

जिनकी रक्त-शर्करा १६०–१८० मिलिग्राम से अधिक हो एवं मूत्र-शर्करा ५ से १०% के बीच मे हो, उनको प्रारम्भ मे अन्न या दूध-दही न देकर केवल उपर्युक्त कच्ची एवं उबली साग-भाजी तथा फल के सेवन से शीघ्र लाभ होता है। अर्थात् उनकी रक्त एवं मूत्र-शर्करा दो सप्ताह के भीतर निश्चित रूप से कम हो जाती है। अनुभव के आधार पर हमारा यह दृढ विश्वास होता जा रहा है। रोगियों के उदाहरणवाले प्रकरण मे यह बात अच्छी तरह समझायी गयी है।

रोगी हमेशा भूख की शिकायत करता रहता है, फिर भी वह जितना आहार आसानी से पचा सके, उतना ही देना उचित है। अत्यन्त

दुर्बल रोगी को, जिसे मूर्च्छा आदि आने की संभावना हो, शहद, सूखे फल प्रतिदिन २० से ५० ग्राम तक देना चाहिए। शहद मे नीम, जामुन, गुलाव एवं हरडा के फूल का शहद विशेष रूप से हितकर है। रोगी मे अति दुर्वलता, चक्कर आदि के लक्षण उत्पन्न न हों, इसकी पूरी सावधानी रखनी चाहिए।

कमजोरी एवं क्षुधा-तृप्ति की दृष्टि से रोगी को साग-भाजी एवं फल के साथ मूंग या कुल्थी का सूप देना चाहिए। मक्खन-रहित छाछ या दूध (Separated milk)—सप्रेटा रोगी को दिया जा सकता है।

रक्त-शर्करा की प्रतिक्रिया को तुरन्त कम करने के लिए प्रातःकाल खाली पेट ताजा नीम की पत्ती का २४-२५ ग्राम रस एवं आहार के साथ छिलकासहित उवला हुआ करेला देना चाहिए। यह अचूक नुस्खा है। इससे मूत्र एवं रक्त-शर्करा घटती है। लेकिन इसकी मात्रा मे अधिकता होने पर अतिसार (Diarrhea) होने की सम्भावना रहती है। रक्त या मूत्र-शर्करा शीघ्र कम करने की दृष्टि से उसकी अधिक मात्रा के लोभ में नहीं पडना चाहिए। जामुन, मेथी, नीबू, मूली, आदि वस्तुएँ भी इसमे काफी सहायक होती हैं।

रक्त-शर्करा एवं मूत्र-शर्करा घटने के निश्चित लक्षण दीखने के पश्चात् अधिक भूख लगने पर रोगी को केवल जौ या नाचनी (मडुआ—एक प्रकार का अल्प श्वेतसारयुक्त अन्न) की रोटी (कम मात्रा मे) दी जा सकती है। इसके अभाव मे ज्वार या बाजरा का उपयोग किया जाय। गेहूँ का उपयोग सवसे अन्त मे, अन्य वस्तुओं के न मिलने पर ही करना चाहिए।

रोगी का आहार-परिवर्तन करते समय शुरूआत के दिनों मे उसके प्रातःकालीन मूत्र की जाँच प्रतिदिन करना उचित है, ताकि असावधानी के कारण रक्त या मूत्र-शर्करा मे वृद्धि न हो। १०–१५ दिन के अन्तर से रक्त-शर्करा की जाँच करनी चाहिए।

रोगी का मानसिक सहयोग अत्यन्त आवश्यक है। भूख को समझदारीपूर्वक सहन करने के लिए उसको बार-बार समझाना चाहिए, अन्यथा क्षुधा के वशीभूत होकर छिपकर खाने के कुछ उदाहरण भी पाये जाते है।

रक्त एवं मूत्र-शर्करा स्वाभाविक होने के पश्चात् रोगी के आहार मे कार्बोहाइड्रेट, प्रोटीन आदि खाद्य-पदार्थो की मात्रा क्षुधा-तृप्ति एवं आरोग्य की दृष्टि से बढाना जरूरी है। इसके साथ-साथ घूमना, आसन, बागवानी, चक्की चलाना या अन्य सौम्य-श्रम या व्यायाम युक्त मात्रा मे करना चाहिए। आहार की तरह व्यायाम भी नियत मात्रा मे होना चाहिए। दोनो को साथ-साथ क्रमशः बढाना चाहिए।

६. चिकित्सा-काल मे वजन

कार्बोहाइड्रेट, प्रोटीन एवं स्नेहरहित आहार से रोगी का वजन अपने-आप कम होता है। कृश रोगियो की अपेक्षा स्थूलकाय रोगियो को भूख कम लगती है, इसलिए वे अन्नरहित फल या शाकाहार पर अधिक दिनो तक रह सकते है। लम्बी अवधि तक साग तथा फल पर रहने से स्थूल रोगियो का वजन आसानी से कम हो जाता है। इसके अलावा उनकी रक्त-शर्करा की मात्रा स्वाभाविक तथा मूत्र-शकरा शून्य हो जाती है।

कृश रोगियो को भूख अधिक लगती है एवं उनमे वजन खोने की गुञ्जाइश भी कम रहती है। तथापि रक्त-शर्करा कम करने की दृष्टि से ऐसे रोगियो को भी कुछ दिन फल एवं साग-भाजी पर रखना चाहिए। चिकित्सा के प्रारम्भिक काल मे शुद्धि-आहार के कारण प्रत्येक रोगी की शक्ति एव वजन घटता है। इसको चिंता नही करनो चाहिए। इतनी सतर्कता अवश्य रखनो चाहिए कि वजन एव शक्ति-क्षीणता की अति न होने पाये, जिससे कोई नया उपद्रव निश्चेनता आदि शुरू न हो जाय। अतिक्षीण रोगियों को सभी प्रकार का आहार देकर उनकी शक्ति बनाये

रखना चाहिए। फिर भी मुख्यतः रक्त एव मूत्र शर्करा घटाने की दृष्टि से ही आहार निर्धारित करना चाहिए।

अतएव शक्ति तथा वजन को आवश्यक महत्त्व देते हुए भी रक्तातिशर्करा को स्वाभाविक स्तर पर लाना एवं मूत्र को शर्करा-शून्य बनाना हमारी चिकित्सा का प्रधान अंग है, इसे नही भूलना चाहिए। रक्त एव मूत्र निर्दोष होने पर ही कृश व्यक्ति को शक्ति एव वजन बढाने की दृष्टि से (पाचन-शक्ति के अनुसार) पौष्टिक आहार दिया जा सकता है। इसके विपरीत नीरोगी होने के पश्चात् भी स्थूल रोगियो को लघु आहार देना चाहिए। उनको आवश्यक श्रम या व्यायाम करना चाहिए, ताकि वजन स्वाभाविक से अधिक न बढने पाये।

७. बाह्य उपचार

उपचार के पश्चात् रोगी को कभी भी थकान नही आनी चाहिए। मधुमेही बहुत जल्दी, अल्प श्रम मे थक जाते है, यह बात हमेशा ध्यान मे रखनी चाहिए। रोगी को उपचार के बाद अगर थकान आती है, तो समझना चाहिए कि उसको लाभ के स्थान पर हानि हो रही है। इसलिए रोगी की प्रतिकार-शक्ति देखकर, गरम-ठण्डा, सौम्य-गरम आदि उपचार देना चाहिए।

उपवास या शुद्धि-काल मे घूमना आदि व्यायाम नही करना चाहिए। आहार की मात्रा के साथ-साथ श्रम या व्यायाम बढाना आवश्यक है।

ठण्डा कटि-स्नान, पेट पर मिट्टी का लेप या पट्टी, सूर्य-स्नान एवं पेट साफ करने के लिए कभी-कभी एनिमा का प्रयोग कर सकते है, आहार का प्रकार तथा परिमाण ही ऐसा रखा जाय, जिससे स्वाभाविक शौच होने लगे। कब्ज के कारण कष्ट होने पर एनिमा का उपयोग अवश्य किया जाय, लेकिन उसका अति प्रयोग न किया जाय।

९. रोगियों के विस्तृत उदाहरण

उदाहरण १

नाम—कुशाभाऊ ओक, उम्र ६३ वर्ष, चिकित्सा की अवधि ६३ दिन, ऊँचाई ५ फुट, वजन ८२ पौण्ड।

प्रवेश-तिथि २९-१०-'५९	निराहार रक्त-शर्करा–४५९ मि० ग्रा० प्र० श० प्रातःकालीन मूत्र-शर्करा–४०%
चिकित्सालय छोड़ने की ता० ३१-१२-'५९	निराहार रक्त-शर्करा–१०५ मि० ग्रा० प्र० श० प्रातःकालीन मूत्र-शर्करा–०·०% वेजन—७५ पौण्ड

वर्तमान बीमारी, उसकी अवधि एवं लक्षण

१. मधुमेह : रक्त-शर्करा–४५९ मिलिग्राम प्रतिशत, प्रातःकालीन मूत्र-शर्करा ४%, गत दो वर्ष से प्रारम्भ हुआ।

२. बहुमूत्र (Polyuria) : ढाई वर्ष पूर्व रोगी को बहुमूत्रता आरम्भ हुई, दिन मे १२-१४ तथा रात्रि में ३-४ बार, पेशाब करते समय बहुत जलन होती है। २४ घण्टे की मूत्र-मात्रा ३३ लिटर।

३. कार्बंकल (Carbuecle) : अस्पताल मे प्रविष्ट होने के एक मास पूर्व रोगी को नितम्ब मे फोड़ा हुआ था। इस कारण रोगी बिलकुल चल नहीं सकता। प्रतिदिन ९९° दुखार रहता है। पेशाब, शौच बिस्तर पर ही करना पड़ता है। फोड़े मे काफी दर्द रहता है, इसलिए नीद कम आती है।

४. क्षुधा एवं तृषाधिक्य : भूख एवं प्यास बहुत लगती है।

५. **कब्ज :** पेट मे वायु तथा कब्ज अधिक रहता है। इसबगोल की भूसी के विना शौच नही होता। हाथ एवं पाँव मे जलन होती है।

पूर्व इतिहास

रोगी ४० वर्ष की उम्र से विधुर है। भूदान-कार्यकर्ता होने से खान-पान अनियमित रहता है। प्रचार के हेतु प्रतिदिन ५-७ मील चलना पडता है। किसी प्रकार का व्यसन नही है। इसके पूर्व कोई रोग नही हुआ।

सामान्य परीक्षा

रोगी काफी कमजोर दीखता है, बिस्तर पकड़े हुए है, चल-फिर नहीं सकता, हृदय एवं फेफड़ो की हालत अच्छी है, त्वचा मे रुक्षता है।

प्रवेश के समय मूत्र की जाँच :

आपेक्षित गुरुत्व-१०२४—

एल्ब्युमिन—लेशमात्र

शर्करा—४%

एसीटोन—मौजूद

डायसिटिक अम्ल—मौजूद

श्लेष्मा-रेशे—अल्प

निराहार रक्त-शर्करा-४५९ मि० ग्रा० प्र० श०

शरीर-ताप-९८.८% (४ बजे शाम)

कार्बंकल का आकार नीबू जितना है, क्रमशः पक रहा है।

रक्तचाप—१६०/८०

नाड़ी—११०

श्वसन—२२

चिकित्सा

आहार तथा उपचार-क्रम नं० १, ८ दिन

(ता० २९ अक्तूबर से ५ नवम्बर तक)

आहार-क्रम

६ वजे नीबू १, शहद १० ग्राम पानी २०० ग्राम (शर्बत)

८ ,, दूध १०० ग्राम, तुलसी-काढा, पानी १५० ग्राम

१२ ,, जौ (Barley) या ज्वार की रोटी १० से २५ ग्राम, उबली साग-भाजी २५० ग्राम, उबली गाजर २५० ग्राम, मट्ठा १०० ग्राम (५ दिन पश्चात् शुरू किया गया) ।

४ ,, सूप २०० ग्राम (टमाटर एवं साग-भाजी का)

६॥ ,, साग-भाजी उबली २५० ग्राम, उबली गाजर १०० ग्राम, अमरूद १००-१५० ग्राम ।

उपचार-क्रम

९ वजे सूर्य-स्नान १५ मिनट

१० ,, पेट पर ठंडी मिट्टी का लेप ३० मिनट

१२ ,, शरीर अँगोछना (Sponge)

२ ,, पेट एवं फोड़े पर गरम-ठंडा सेक दिन मे तीन बार—प्रातः ८ बजे दोपहर १अ वजे तथा रात्रि ८॥ वजे ।

रोगी की अवस्था : फोडे का दर्द बढ़ा है, इसलिए रोगी को नीद नही आती । बिस्तर पर उठने-बैठने से चक्कर आता है । भूख अधिक लगती है । पेशाब दिन मे १५-१६ बार तथा रात को ४ बार होता है । फोड़ा वढ़ने लगता है और संतरा जितना बड़ा होकर फूट जाता है ।

रक्त और पूय अधिक मात्रा मे वहता है। रोगी कमजोरी एवं व्यथा से पीडित है।

ता० ४ नवम्वर १९५९, प्रात कालीन मूत्र का विश्लेषण :
आपेक्षित गुरुत्व— १०२६
शर्करा—५%
एसीटोन—मौजूद (Present)
डायसिटिक अम्ल–मौजूद (Present)
२४ घंटे की मूत्र मात्रा–3। लिटर

आहार तथा उपचार-क्रम नं० २, १५ दिन

(ता० ६-११-'५९ से २०-११-'५९ तक)

आहार क्रम

६ वजे नीम की पत्ती का रस २० ग्राम
८. ,, ताजा टमाटर का रस १५० ग्राम
१२ ,, उवला करेला ५० ग्राम, उवली साग-भाजी १५० ग्राम
४ ,, कच्ची साग—ककड़ी १०० ग्राम, पत्तागोभी ३० ग्राम, मूली ३० ग्राम, ताजा टमाटर का रस १५० ग्राम
६॥ ,, पकी साग-भाजी २५० ग्राम, ककड़ी १५० ग्राम, पत्तागोभी, मूली ३० ग्राम।

उपचार-क्रम

१ एनिमा–१ दिन के अन्तर से
२. घाव धोना-प्रतिदिन दो वार नीम के उवले हुए पानी से
३. ड्रेसिग–नारियल तेल एवं पानी से भीगी हुई कपास की पट्टी बाँधना
४. प्रतिदिन शरीर अँगोछना एवं पूर्ण आराम

रोगी की अवस्था : अभी तक रोगी की कमजोरी दूर नहीं हुई, लेकिन भूख अच्छी लगती है। फोड़े से पूय काफी मात्रा में निकल जाने के कारण उसमें दर्द बहुत कम है। रात को नींद ४-५ घण्टे आती है। शौच अपने-आप साफ होता है, चक्कर नहीं आते। वजन ७७ पौंड है।

ता० १६-११-'५९, प्रातःकालीन मूत्र की जाँच का विवरण :

आपेक्षित गुरुत्व—१००८

एल्व्युमिन
शर्करा
डायसिटिक अम्ल
पूयरेशे
} नहीं

नोट : कमजोरी के कारण रक्त-शर्करा की जाँच नहीं की गयी।

आहार तथा उपचार-क्रम नं० ३, १५ दिन

(तारीख २१-११-'५९ से ५-१२-'५९ तक)

आहार-क्रम

८ बजे छाछ १०० ग्राम से ३०० ग्राम तक (क्रमशः बढ़ाते हुए), सन्तरा १

१० ,, ताजा टमाटर-रस १०० ग्राम

१२ ,, मट्ठा २०० ग्राम, सूरन ५० ग्राम, उबली साग ५० ग्राम, ककड़ी १५० ग्राम, पत्तागोभी ५० ग्राम

४ ,, ताजा टमाटर का रस १५० ग्राम

उपचार-क्रम

१. सूर्यस्नान १० मिनट
२. एनिमा शौच न होने पर
३. फोड़े की सफाई एवं पट्टी बाँधना दिन में दो बार
४. प्रतिदिन अँगोछना।

६।। बजे उबली साग २०० ग्राम (ककडी १५० ग्राम, पत्ता-गोभी ५० ग्राम) कच्ची।

रोगी की अवस्था : रोगी शक्ति-लाभ कर रहा है, वह शौचालय तक आसानी से जा सकता है। नीद अच्छी आती है। घाव करीब-करीब अच्छा हो गया है। उसमे दर्द बिलकुल नही है, पूय बहुत कम निकलता है। रोगी प्रसन्नचित्त है। उसकी अवस्था मे काफी सुधार हुआ है। वजन ७९ पौंड है।

ता० १४-११-'५९, रक्त-शर्करा की जॉच का विवरण :

निराहार रक्त-शर्करा १२३ मिलिग्राम प्रतिशत। मूत्र-शर्करा सामान्य (Normal) है। भोजन के दो घंटे बाद भी मूत्र-शर्करा सामान्य है।

आहार तथा उपचार-क्रम नं० ४, ११ दिन

(६-१२-'५९ से १६-१२-'५९ तक)

आहार-क्रम	उपचार-क्रम
८ बजे मट्ठा ३०० ग्राम	१. सूर्यस्नान १०-१५ मिनट
१० ,, ताजा टमाटर का रस १५० ग्राम	२. फोड़े को दिन मे दो बार धोना (पूर्ववत्)
१२ ,, नाचनी–मडुआ रोटी २० से ८० ग्राम तक (क्रमशः बढाते हुए) उबली साग २५० ग्राम, ककडी १०० ग्राम, सूरन ३० ग्राम, कचूम्बर २० ग्राम, भाजी २० ग्राम	३. प्रतिदिन शरीर अँगोछना
४ ,, ताजा टमाटर का रस १५० ग्राम	

६॥ बजे उवली साग-भाजी ३०० ग्राम, पत्तागोभी ३० ग्राम, टमाटर १५० ग्राम, ककड़ी १०० ग्राम।

रोगी की अवस्था : शक्ति बढ रही है, वजन ७६ पौंड है। रोगी घूमने-फिरने लगा है, इसलिए रोगी का वजन कम हुआ, लेकिन शक्ति बढी है। सुधार तेजी से हो रहा है।

ता० १३-१२'५९ को रक्त एवं मूत्र-शर्करा की रिपोर्ट निम्न प्रकार थी :

निराहार रक्त-शर्करा १०५ मिलिग्राम प्रतिशत—सामान्य।

प्रातःकालीन मूत्र-शर्करा—सामान्य।

अन्तिम १५ दिनों का आहार तथा उपचार-क्रम

(ता० १७ से ३१-१२-'५९ तक)

आहार-क्रम

८ बजे मट्ठा ३५० ग्राम

१० ,, ताजा टमाटर का रस १५० ग्राम

१२ ,, नाचनी की रोटी १०० ग्राम, मक्खन १० ग्राम, मट्ठा १०० ग्राम, उबली साग २५० ग्राम, पत्ताभाजी ५० ग्राम, गाजर ५० ग्राम, ककड़ी १०० ग्राम,

४ ,, टमाटर का रस १५० ग्राम,

६॥ ,, ज्वार की रोटी ५० ग्राम, सूरन ३० ग्राम, उबली साग-भाजी ३०० ग्राम, कच्ची तरकारी (टमाटर १५० ग्राम, गाजर

उपचार-क्रम

६ बजे घूमना ½ से १ मील

८॥ ,, सूर्यस्नान १५ मिनट

९ ,, सर्वांग मालिश १ घंटा

११ ,, सादा स्नान

१॥ ,, पेट पर ठंडी मिट्टी की पट्टी

४ ,, ठंडा मेहनस्नान ५ मि०

६॥ ,, घूमना ½ से १ मील

५० ग्राम, ककड़ी १०० ग्राम,
पत्तागोभी ३० ग्राम)।
ता० ३१-१२-'५९, प्रातःकालीन मूत्र की जाँच—सामान्य।

विवेचन

प्रवेश के समय रोगी काफी कमजोर था। फिर भी गम्भीर एवं संकटमय अवस्था के कारण शरीर-शुद्धि आहार पर रखना पड़ा।

हमारे सहयोगी एम० डी० डॉक्टर की धारणा थी कि इस दुर्बल वृद्ध रोगी का ठीक होना सम्भव नही है। कार्बंकल को देखकर उनको भय हुआ। आपरेशन की सलाह दी। उनके शंकायुक्त परामर्श के कारण हम लोगो ने विशेष सावधानी से चिकित्सा की। १५ दिन की चिकित्सा मे रक्त-शर्करा १२३ मिलिग्राम प्रतिशत तथा मूत्र निर्दोष होने पर वे निश्चिन्त एवं प्रभावित हुए। उन्होने कहा कि एलोपैथिक चिकित्सा-पद्धति से इतने कम समय मे इस प्रकार का परिणाम आना कठिन है।

रोगी की गम्भीर अवस्था देखकर हम चिन्तित थे। मूत्र का प्रथम जाँच मे एसीटोन एवं डायसिटिक अम्ल का होना खतरे का सूचक था। इन दोनो दूषित क्षारों की उपस्थिति मे रोगी को मधुमेह निश्चेतनता (Coma की आशंका थी। इसलिए काफी सावधानी एवं सूक्ष्मता से रोगी की अवस्था का अध्ययन करते हुए इलाज किया गया।

प्रवेश के समय रोगी स्वयं अपनी हालत को देखकर सशंक हो चुका था। लेकिन थोड़े दिनो के पश्चात् सुधार मालूम होने पर उसको शांति मिली तथा धैर्य बँधा।

घर जाते समय रोगी को सिर्फ ६ बार पेशाब होता था। भूख तेज होने के कारण सुबह-शाम अन्न दिया गया। वह स्वस्थ एवं प्रसन्न है।

मूत्र-शर्करा कम होने का अनुक्रम :

तारीख	शर्करा
३०-१०-'५९	५ प्रतिशत (भोजन के दो घण्टे पश्चात् का मूत्र)
३१-१०-'५९	४ ,, ,, ,, ,, ,,
४-११-'५९	४ ,, (प्रातःकालीन मूत्र)
५-११-'५९	५ ,, ,, ,,
११-११-'५९	० ,, ,, ,,
१३-११-'५९	० ,, ,, ,,
१६-११-'५९	० ,, ,, ,,
२५-११-'५९	० ,, ,, ,,
२६-११-'५९	० ,, ,, ,,
१४-१२-'५९	० ,, ,, ,,
२४-१२-'५९	० ,, ,, ,,
३०-१२-'५९	० ,, ,, ,,

रक्त-शर्करा कम होने का अनुक्रम :

तारीख	मात्रा
३०-१०-'५९	४५९ मि० ग्रा० प्र० श०
१४-११-'५९	१२३ ,, ,, ,, ,,
१३-१२-'५९	१०५ ,, ,, ,, ,,

उदाहरण २

नाम—श्रीचन्द तोताराम, उम्र २२ वर्ष, चिकित्सा की अवधि ३५ दिन, ऊँचाई ५ फुट ६ इंच, वजन ११०½ पौंड।

प्रवेश-तिथि ८-८-'५९ { निराहार रक्त-शर्करा—३४४ मि० ग्रा० प्र० श०
प्रातःकालीन मूत्र-शर्करा—६·४%

चिकित्सालय छोड़ने की ता० १२-९-'५९ { निराहार रक्त-शर्करा–८३.७ मि० ग्रा० प्र० श० प्रातःकालीन मूत्र-शर्करा–०·०% वजन–१०२ पौंड }

वर्तमान बीमारी, उसकी अवधि एवं लक्षण

१. मधुमेह : गत चार वर्ष से यह बीमारी है। शुरुआत मे रोगी ने इनसुलिन के इन्जेक्शन लिये, जिससे उनको तात्कालिक लाभ हुआ। बीच मे तीन महीने उसने आयुर्वेदीय औषधि का प्रयोग किया, फिर भी रक्त-शर्करा को नियंत्रण मे रखने के लिए नियमित रूप से इनसुलिन के इन्जेक्शन लेने पड़ते है।

२. क्षुधा तथा तृषाधिक्य : हमेशा तीव्र भूख एव प्यास बनी रहती है।

३. बहुमूत्रता : दिन मे १४-१६ बार एवं रात को ४-६ बार पेशाब के लिए जाना पड़ता है।

४. कृशता : अतिशय दुर्बलता एवं चक्कर आने के लक्षण भी मौजूद है। चार वर्ष पूर्व रोगी का वजन १७० पौड था, मधुमेह के बाद वजन क्रमशः घटकर अब केवल ११०½ पौड है। हाथ-पैरो मे सतत जलन होती है। कमजोरी के कारण विशेषकर रात मे सिर-दर्द रहता है।

५. दुर्बलता : शरीर की संधियो मे दर्द है, लेकिन घुटनों मे अधिक होता है। पैर की पिंडलियों मे सतत दर्द एवं अकस्मात् खिचाव होता है और थोड़ी दूर चलने से अतिशत थकान लगती है।

६. कब्ज : कभी-कभी पेट मे दर्द एवं वायु का प्रकोप होता है।

पूर्वकालीन बीमारी

१२ वर्ष की उम्र मे रोगी को फेफड़ो के क्षय (Lung T. B.) की बीमारी हुई थी। उसकी अवधि ६ मास तक रही। उस समय एलोपैथिक

इलाज से रोगी को लाभ हुआ। परिवार मे अब तक किसीको मधुमेह या क्षय की बीमारी नही हुई।

सामान्य परीक्षा

प्रवेश के समय रोगी को कब्ज रहता है। पेट मे दर्द एवं थोड़ा भारीपन रहता है। यकृत थोड़ा बढा हुआ है। रक्तचाप ११२/७५, हृदय की स्थिति ठीक है। पेशाब दिन मे १४-१६ बार एवं रात को ४ बार होता है।

प्रातःकालीन मूत्र की जाँच का विवरण :
मूत्र-शर्करा–६.४%
एल्ब्युमिन–मौजूद
पूय कोशिकाएँ–१० से १५
कैलशियम आक्जलेट्स–अधिक
निराहार रक्त-शर्करा–३४० मि० ग्रा० प्र० श०

चिकित्सा

आहार-क्रम न० १, १७ दिन (८-८-'५९ से २४-८-'५९ तक)

६ बजे नीबू १, शहद २० ग्राम, पानी २५० ग्राम (शर्बत)
८ ,, धारोष्ण दूध २५०
१२ ,, ज्वार की रोटी ५० ग्राम, करेला ५० ग्राम, पकी साग-भाजी ५० ग्राम, छाछ, १२० ग्राम
४ ,, साग-भाजी का सूप १५० ग्राम
७ ,, ज्वार की रोटी ५० ग्राम, दही १०० ग्राम, उबली साग २५० ग्राम, करेला ५० ग्राम, उबली भाजी ५० ग्राम, कच्ची साग-भाजी ५० ग्राम, सूखे अंजीर २ नग।

आहार-क्रम नं० २ से ६ तक, १८ दिन
(ता० २५-८-'५९ से ११-९-'५९ तक)

आहार-क्रम नं० २ (४ दिन उपवास केवल पानी पर)

आहार-क्रम नं० ३० (१ दिन रसाहार, १२ संतरे दिनभर मे चार बार–९, १२, ३ तथा ६ बजे, प्रति बार ३ संतरे के हिसाब से)
आहार-क्रम नं० ४ (५ दिन, आहार-क्रम नं० १ की तरह)
आहार-क्रम नं० ५ (१ दिन उपवास, केवल पानी पर)
आहार-क्रम नं० ६ (७ दिन, आहार-क्रम नं० १ की तरह)

उपचार-क्रम २५ दिन (ता० ८-८-'५९ से ११-९-'५९ तक)

६ बजे घूमना शक्ति के अनुसार
८॥ ,, सूर्यस्नान १५-२० मिनट
९ ,, सर्वांग मालिश ४५ मिनट
१०॥ ,, ठंडा कटिस्नान ५ मिनट
१॥ ,, पेट पर ठंडी मिट्टी की पट्टी १ घंटा
४ ,, ठंडा मेहनस्नान ५ मिनट
६ ,, शक्ति के अनुसार घूमना
९ ,, उदर (Abdomen) पर ठंडी मिट्टी की पट्टी १ घंटे तक

नोट : उपवास एवं रसाहार के दिनो मे रोगी से पूर्ण आराम करने के लिए कहा गया। ३५ दिन चिकित्सा करने के बाद रोगी १२ सितम्बर १९५९ को स्वस्थ होकर अपने घर गया।

चिकित्सालय छोड़ते समय पेशाब की जाँच का विवरण :

प्रात:कालीन
एल्ब्युमिन–नही
शर्करा –,,
पूय कोशिकाएँ–नही
कैलशियम आक्जलेट्स–नही

भोजन के दो घंटे उपरान्त
शर्करा–नही
कीटोन–,,

विसर्जन (Discharge) के समय रक्त-शर्करा की जाँच :
निराहार रक्त-शर्करा–८३ ७ मिलिग्राम प्रतिशत।

विवेचन

प्रवेश के समय रोगी बहुत ही कृश अवस्था मे आया था, क्षुधा भी तीव्र थी, इसलिए हम उसको तुरन्त अल्पाहार या उपवास पर नही ला सकते थे। इसके अलावा उसको एक बार क्षय-रोग भी हो चुका था। शक्ति-प्राप्ति की दृष्टि से रोगी को सामान्य आहार पर १७ दिन तक रखा गया। उसके बाद शक्ति आने पर ही ठीक मौके पर उसको चार दिन का उपवास करवाया गया। सामान्यतः शुद्धि-आहार या अल्पाहार के पश्चात् उपवास करवाने का नियम है, लेकिन इस रोगी को हमने सामान्य आहार के उपरान्त एकदम उपवास करवाया।

यह भी बहुत महत्त्व की बात है कि सिर्फ २५ दिन के उपचार से ३४४ मि० ग्रा० प्र० श० रक्त-शर्करा कम होकर ८३ ७ मि० ग्रा० प्र० श० तक नीचे आ गयी, जब कि उसको प्रतिदिन २० ग्राम शहद एवं २ अंजीर दिये जाते थे (उपवास एव रसाहार के दिनो को छोड़कर)। यह सिर्फ इसलिए सम्भव हुआ कि रोगी युवक था और उम्र केवल २२ वर्ष थी। रक्त एवं मूत्र-शर्करा कम होने का मुख्य श्रेय उपवास को दिया जा सकता है। उपर्युक्त सामान्य आहार पर रोगी को दो मास तक रहने के लिए कहा गया। महीने मे १ दिन पानी का उपवास। प्रतिदिन घूमने तथा हो सके तो खेल-कूद मे भाग लेने की सलाह दी गयी।

उदाहरण ३

नाम—सीताबाई चेतनदास, उम्र ५२ वर्ष, चिकित्सा की अवधि ८९ दिन, ऊँचाई ५ फुट ५ इंच, वजन १२३ पौड।

प्रवेश-तिथि २-९-'५८ { निराहार रक्त-शर्करा—२०० मि० ग्रा० प्र० श०
प्रातःकालीन मूत्र-शर्करा-६.६%

चिकित्सालय छोड़ने की ता० २९-११-'५८
- निराहार रक्त-शर्करा—१२० मि० ग्रा० प्र० श०
- प्रातःकालीन मूत्र-शर्करा–नही
- वजन—१२० पौड

वर्तमान बीमारी, उसकी अवधि एवं लक्षण

१. मधुमेह : रक्त-शर्करा २०० मि० ग्रा० प्र० श०, मूत्र-शर्करा ६.६%, तीन वर्ष से बीमार है।

२. दुर्बलता : अतिशय कमजोरी के कारण चक्कर आना एवं कभी-कभी मूच्छित होकर गिर पडना। मूर्च्छा १५-२० मिनट तक रहती है। फिर वह अपने-आप दूर हो जाती है। थोड़ा-सा श्रम करने से हृदय धडकने लगता है।

३. संधिवात : कन्धा, कोहनी, कलाई, घुटने, गुल्फ-सधि (Ankle Joint) मे सूजन एवं दर्द, वायी एड़ी मे अतिशय व्यथा पिछले तीन वर्ष से है। ढाई वर्प पूर्व मासिक स्राव (Menopause) होने के बाद सधिवात के दर्द मे विशेष रूप से वृद्धि हुई।

४. पेट में जोर से मरोड़ : यह तकलीफ १५ वर्ष पुरानी है तथा दिन मे एक-दो वार हो जाता है। अनेक औषधि-उपचार के पश्चात् भी यह बीमारी पूर्णतः ठीक नही हुई, मिर्च-मसाले या बैगन खाने से वह बढ जाती है। दवा वन्द करने पर पेट का दर्द पुनः शुरू हो जाता है।

पूर्वकालीन बीमारी

१२ वर्ष की उम्र मे न्युमोनिया हुआ था। संधिवात की बीमारी सर्वप्रथम १७ वर्ष की उम्र मे हुई थी, जो ४ मास तक चली और एलोपैथिक चिकित्सा से कम हुई, लेकिन गत १५ वर्षो से वह काफी बढ़ गयी है। सर्दी-जुकाम की बीमारी बचपन से अल्प या अधिक मात्रा में बनी रहती है।

सामान्य परीक्षा

पेट मे दर्द एव कड़ापन। पैर, कन्धे एवं उँगलियो की संधियो मे किंचित् सूजन है, हृदय कमजोर है, कभी धड़कन (Palpitation) होती है।

ता० २-९-'५८ प्रातःकालीन मूत्र की जाँच का विवरण :
एल्ब्युमिन–लेशमात्र (Present Trace)
शर्करा–६%
ता० ६-९-'५८ रक्त-शर्करा–२०० मि० ग्रा० प्र० श०।

चिकित्सा

आहार तथा उपचार-क्रम नं०, १, १९ दिन
(ता० २-९-'५८ से २०-९-'५८ तक)

आहार-क्रम

६ बजे नीबू ½ शहद २० ग्राम, पानी २५० ग्राम
८ ,, दूध १०० ग्राम, तुलसी, काढ़ा १५० ग्राम
१२,, गेहूँ की रोटी ५० से १०० ग्राम, साग-भाजी २५० ग्राम, छाछ २५० ग्राम
४ ,, सूप २५० ग्राम
७ ,, दूध २५० ग्राम, टमाटर १०० ग्राम, संतरा २।

उपचार-क्रम

६॥ बजे शक्ति अनुसार घूमना (शुरू मे २ फर्लांग)
७,, एनिमा–प्रथम दो सप्ताह प्रतिदिन, अंतिम ४ दिनों मे एक दिन छोड़कर
८॥ ,, सूर्यस्नान १५-२० मिनट
९ ,, सर्वांग मालिश ३० से ४५ मिनट
११॥ ,, सिर तथा पेट पर ठंडी मिट्टी की पट्टी ४५ से ६० मिनट
३ ,, ठंडा मेहनस्नान ५ मिनट
६ ,, शक्ति के अनुसार घूमना

७॥ बजे प्रार्थना
८॥ ,, संधियों पर गरम-ठंडा पानी का सेंक २० से ३० मिनट।

रोगी की अवस्था : भूख पहले की अपेक्षा अधिक लगती है। छाछ पीने के कारण पेट मे भारीपन कम है। पेट मे दर्द नही होता। सन्धियो मे दर्द पूर्ववत् है। सारे वदन मे दर्द होता है। रात को केवल दो-तीन घण्टे नीद आती है। ज्यादा श्रम करने से चक्कर आता है।

ता० २२-९-'५८, निराहार रक्त-शर्करा–१५२ मि० ग्राम प्र० श०। प्रातःकालीन मूत्र-शर्करा नही।

आहार तथा उपचार-क्रम नं० २, ४६ दिन

(ता० २१-९-'५८ से ५-११-'५८ तक)

आहार-क्रम	उपचार-क्रम
६ बजे नीवू १ पानी २५० ग्राम, शहद १० ग्राम, (शर्बत)	६ बजे घूमना बन्द (विश्रान्ति)
	७ ,, एनिमा बन्द (शौच साफ आता है।)
८ ,, तुलसीकाढा १०० ग्राम, दूध १०० ग्राम, (दूध क्रमशः २५० ग्राम, तक वढ़ाया गया)	८॥ ,, सूर्यस्नान १५ मिनट
	९ ,, सर्वाग मालिश ४० मिनट
	१० ,, पेट पर ठंडी मिट्टी की पट्टी ४० मिनट
१० ,, सूप २५० ग्राम (टमाटर तथा साग-भाजी का)	२ ,, सिर तथा पेट पर ठंडी मिट्टी की पट्टी १ घण्टा
१२ ,, छाछ २५० ग्राम, टमाटर १०० ग्राम, साग-भाजी १०० ग्राम, कचूम्बर २० ग्राम, छाछ क्रमशः बढाकर	३ ,, संधियो पर गरम-ठंडा सेक २० मिनट
	४ ,, ठंडा मेहनस्नान ५ मिनट

आहार-क्रम	उपचार-क्रम
३५० ग्राम की गयी। (एक सप्ताह के बाद १० ग्राम मक्खन शुरू किया)	८ बजे संधियो पर गरम-ठंडा सेंक २० मिनट।
४½ बजे सूप २५० ग्राम (टमाटर तथा साग-भाजी का)	
७ ,, दूध २५० ग्राम, संतरा ३, ताजे टमाटर १०० ग्राम, उबली साग-भाजी १०० ग्राम।	

रोगी की अवस्था : रात के समय पेशाव के लिए २-३ वार जाना पड़ता है, उस समय चक्कर आता है। अस्थि-सधियो मे दर्द काफी कम है। रात को पाँच-छः घण्टे नीद आती है। चक्कर पहले से कम आता है। पेट मे भारीपन या दर्द नही है। प्रतिदिन शौच साफ होता है।

ता० ३-१०-'५८, रक्त-शर्करा—१३३ मि० ग्रा० प्र० श० प्रातःकालीन मूत्र-शर्करा—नही। भोजन के दो घण्टे पश्चात् रक्त-शर्करा नही।

आहार तथा उपचार-क्रम नं० ३, २४ दिन
(६ नवम्बर से २९ नवम्बर तक)

आहार-क्रम	उपचार-क्रम
६ बजे नीबू १, शहद २० ग्राम, पानी २५० ग्राम (शर्बत)	६ बजे शक्ति के अनुसार घूमना क्रमशः २ मील तक बढ़ाये
८ ,, दूध कच्चा ३५० ग्राम, धारोष्ण	७ ,, सूर्यस्नान २० मिनट
१० ,, सूप २५० ग्राम (टमाटर तथा अन्य साग-भाजी का)	८ ,, सर्वांग मालिश १ घंटा
	११॥ ,, सिर तथा पेट पर ठंडी मिट्टी की पट्टी ४० से ६० मिनट
१२ ,, रोटी जौ की ५० ग्राम, साग-भाजी २५० ग्राम, मट्ठा २५० ग्राम मक्खन १० ग्राम	४ ,, ठंडा मेहनस्नान ५ मिनट

४ वजे सूप २५० ग्राम (टमाटर तथा अन्य साग-भाजी का)
६ ,, दूध ३५० ग्राम, उबली साग-भाजी २५० ग्राम, कचूम्बर ३० ग्राम, ताजे टमाटर १०० ग्राम।
६ वजे शक्ति के अनुसार घूमना क्रमशः २ मील तक बढायें
८॥ ,, संधियों पर गरम-ठडा सेंक २० से ३० मिनट।

रोगी की अवस्था : दाहिने हाथ की अँगुलियो मे कभी-कभी दर्द होता है, अन्य सधियो मे कोई तकलीफ नही है, कमजोरी विलकुल नही है। रोगी प्रतिदिन ४ मील घूम सकता है। पेट मे दर्द या भारीपन नही है। प्रतिदिन शौच साफ होता है। चक्कर, मूर्च्छा एवं घवराहट आदि कुछ नही है।

ता० २४-११-'५८, रक्त-शर्करा–१२० मि० ग्रा० प्र० श०।

ता० २८-११-'५८, मूत्र-शर्करा-नही (भोजन के दो घंटे बाद)।

विवेचन

८९ दिन की चिकित्सा-अवधि कुछ अधिक मालूम होती है, लेकिन रोगी को सधिवात एवं पाचन-सम्बन्धी रोग होने के कारण तथा वयस्क एवं दुर्वल होने की वजह से चिकित्सा-अवधि अधिक लगना स्वाभाविक है। सिर्फ दाहिनी अँगुलियो की सन्धियो के दर्द के अतिरिक्त वह पूर्णतः रोग-मुक्त हुई, ऐसा कह सकते है।

रोगी कमजोर एवं वयस्क होने के कारण उसको एक भी उपवास नही करवाया गया, सम्भव था कि उपवास करवाने पर उसकी प्रतिक्रिया अच्छी न होती, वल्कि उसकी बेहोशी एवं चक्कर मे वृद्धि होती।

मूत्र-शर्करा कम होने का अनुक्रम

तारीख	शर्करा-मात्रा
२ सितं०'५८	६.६% प्रातःकालीन मूत्र

रक्त-शर्करा कम होने का अनुक्रम

तारीख	शर्करा-मात्रा
६ सितं०' ५८	२०० मि० ग्राम प्र० श०

५ सित०'५८ ०·३३% प्रातःकालीन मूत्र	२२ सितं०'५८ १५२ मि० ग्राम प्र० श०
१० " " ०.००% "	
१४ " " नही (भोजन के दो घण्टे वाद)	३ " " १३३ "
१९ " " " "	२४ नवं० " १२० "
२२ " " " "	
३ अक्तू० " "	

उदाहरण ४

नाम— गुलामअली केशवजी पोरबन्दरवाला, उम्र ५० वर्ष, चिकित्सा-काल ४८ दिन, ऊँचाई ५ फुट २ इञ्च, वजन १९५ पौड ।

प्रवेश-तिथि १४-९-'५८	निराहार रक्त-शर्करा—१६५ मि० ग्रा० प्र० श० प्रातःकालीन मूत्र-शर्करा—६६%
घर जाने की तिथि ३०-१०-'५८	निराहार रक्त-शर्करा—११२ मि० ग्रा० प्र० श० प्रातःकालीन मूत्र-शर्करा—०.०% वजन—१७० पौड

वर्तमान बीमारी, उसकी अवधि एवं लक्षण

१. मधुमेह : यह बीमारी ६ वर्ष से है। २ अक्तूवर १९५३ की मूत्र-जॉच की रिपोर्ट इस प्रकार है :

निराहार रक्त-शर्करा—१५९ मि० ग्रा० प्र० श०। प्रातःकालीन मूत्र-शर्करा—नही।

अब तक इनसुलिन-इन्जेक्शन के द्वारा ही रोग पर नियन्त्रण रखा गया है। उपर्युक्त मूत्र तथा रक्त की रिपोर्ट डॉ० व्ही० ए० सालसकर, एम० डी० द्वारा प्रस्तुत की गयी है।

२. बहुमूत्र : दिन मे १२ से १५ बार तथा रात मे ३-४ बार।

३. **मोटापा :** गत १५ वर्षो से है, जिसका इलाज एलोपैथी चिकित्सा-पद्धति से करवाया, लेकिन कोई लाभ नही हुआ। वजन १९५ पौण्ड है।

४. **रक्तचाप :** रक्तचाप १६०/१०० है।

५. **क्षुधा तथा तृष्णाधिक्य :** अति तीव्र भूख तथा प्यास लगना ६ वर्ष से है।

६ **दुर्बलता :** पिंडलियो मे खिंचाव तथा गत ५ माह से थकान तथा कमजोरी की अनुभूति होती है।

पूर्व-इतिहास

१३ वर्ष की उम्र मे टायफाइड हुआ था। उस समय रोग-मुक्त होने की दृष्टि से १० दिन मे ११ सी० सी० क्लोरोमाइसीटीन की गोलियाँ दी गयी थी।

आदतें

रोगी को मिठाई तथा तली हुई चीजे खाने का बडा शौक है। रोगी मांसाहारी है। पिछले १० वर्षो से किसी प्रकार का व्यायाम नही करते।

पारिवारिक इतिहास

पिता की मृत्यु ५८ वर्ष की उम्र मे मूत्र-प्रणाली की बीमारी के कारण हुई।

एक बड़ी बहन को ४५ वर्ष की उम्र मे मधुमेह की बीमारी हुई। वह दस वर्ष तक मधुमेह की बीमारी से पीड़ित रही और ५५ वर्ष की अवस्था मे निश्चेतनता के कारण उसकी मृत्यु हुई।

चिकित्सा

आहार तथा उपचार-क्रम नं० १, ७ दिन
(ता० १४-९-'५८ से २०-९-'५८ तक)

आहार-क्रम	उपचार-क्रम
५ बजे नीबू १, पानी २५० ग्राम (शर्बत)	६॥ बजे घूमना शक्ति के अनुसार १ से २ मील

८ बजे मट्ठा २५० ग्राम
१० „ साग-भाजी का सूप २५० ग्राम
१२ „ उबली साग-भाजी ३०० ग्राम, गाजर ५० ग्राम, ककड़ी ५० ग्राम, बाजरी रोटी ५० ग्राम, कचूम्बर ३० ग्राम कच्चा नारियल २० ग्राम
४ „ सूप २५० ग्राम (टमाटर १२५ ग्राम, अन्य साग-भाजी १२५ ग्राम)
६॥ „ दही २५० ग्राम, ताजा टमाटर १०० ग्राम, भाजी ५० ग्राम, अमरूद २५० ग्राम, कचूम्बर ३० ग्राम, खोपरा २० ग्राम।

७ बजे ठंडा कटिस्नान ३ से ७ मिनट
८॥ „ सूर्यस्नान २० मिनट
९ „ सर्वांग मालिश ४० से ६० मिनट
११ „ सादास्नान
२ „ सिर तथा पेड़ू पर ठंडी मिट्टी की पट्टी १ घंटा रखना
७॥ „ प्रार्थना

रोगी की अवस्था : बहुमूत्र के लक्षण मे कोई परिवर्तन नही हुआ। शौच प्रतिदिन साफ होता है। भूख अधिक लगती है। मूत्र-शर्करा ६.६% से घटकर लेशमात्र रह गयी। रोगी पहले से कुछ अच्छा अनुभव करता है।

ता० १७-९-'५९, प्रातःकालीन मूत्र का विवरण :

आपेक्षित गुरुत्व—१०३०
शर्करा—लेशमात्र
कीटोन—अल्पमात्रा मे
पूयरेगे—अधिक मात्रा मे
यरिक अम्ल— „ „

कैलशियम आक्जलेट्स—अधिक मात्रा मे
क्रिस्टल्स— „ „ „

आहार तथा उपचार-क्रम नं० २, ५ दिन
(ता० २१ से २५-९-'५८ तक)

आहार-क्रम	उपचार-क्रम
उपवास—केवल पानी पर ५ दिन	९ बजे सर्वांग मालिश १ घंटा
	१२ „ सादा स्नान
	२ „ ठंडी मिट्टी की पट्टी सिर तथा पेडू पर १ से १॥ घंटे तक
	४ „ ठंडा मेहनस्नान ७ से १० मिनट तक

नोट : रोगी को आराम करना चाहिए।

रोगी की अवस्था : उपवास-काल मे प्रथम तीन दिन रोगी को किसी प्रकार का कष्ट नही हुआ, लेकिन चौथे और पाँचवें दिन रोगी को काफी कै हुई, जिससे कष्ट हुआ और ९९° तक बुखार भी चढ़ा, फिर भी वजन अधिक होने से रोगी को विशेष कमजोरी नही आयी। उपवास-काल मे एनिमा नही दिया गया। प्रथम दो दिन शौच अपने-आप हुआ। शेष तीन दिनो मे शौच नही हुआ। कै एवं अनिद्रा के कारण सूर्यस्नान नही किया।

आहार तथा उपचार-क्रम नं० ३, ५ दिन (ता० २६ से ३० तक)

आहार-क्रम	उपचार-क्रम
८ बजे संतरा २	९ बजे सर्वांग मालिश १ घंटा
१० „ मट्ठा १०० ग्राम	११ „ सादा स्नान
१ „ „ „ „	१ „ पेट पर ठंडी मिट्टी की पट्टी
४ „ संतरा २	३ „ ठंडा मेहनस्नान ५ मिनट
६ „ मट्ठा १०० ग्राम	अन्य समय पूर्ण आराम
८ „ संतरा २	

नोट : कै होने के कारण रोगी को काफी बेचैनी हुई, इसलिए शीघ्र ही मट्ठा देना पड़ा।

रोगी की अवस्था : बेचैनी दूर हुई, नीद अच्छी आती है तथा तबीयत मे सुधार है। ता० २८ को वजन १७८ पौंड रहा, अर्थात् १४ दिनो मे १७ पौंड वजन घटा।

आहार तथा उपचार-क्रम नं० ४, २१ दिन (ता० १ से २१)

आहार-क्रम	उपचार-क्रम
६ बजे नीबू १, गरम पानी २५० ग्राम	५ बजे घूमना क्रमशः बढाते हुए १ से २ मील तक
१२ ,, छाछ १०० ग्राम (१० दिन के बाद २५० ग्राम छाछ दी गयी), गाजर ५० से १०० ग्राम, चटनी १०-२० ग्राम (नारियल तथा गरी की)	८॥ ,, सूर्यस्नान १५ से २० मि०
	९ ,, सर्वांग मालिश १ घंटा
	२ ,, ठंडी मिट्टी की पट्टी (सिर तथा पेड़ू पर) १ घंटे तक
	४ ,, ठंडा मेहनस्नान ५ मिनट
	६॥ ,, घूमना क्रमशः बढाते हुए १ से २ मील तक
६ ,, दही १०० ग्राम (पाँच दिन के बाद ता० ६ से शुरू किया गया)	

नोट : प्रथम पाँच दिन रोगी को १०० ग्राम साग-भाजी दी गयी तथा शेष १६ दिन नही दी गयी।

रोगी की अवस्था : वजन १७० पौंड है। खास कोई तकलीफ नही है। प्रातःकालीन मूत्र मे शर्करा नही है। निराहार रक्त-शर्करा ता० २० की रिपोर्ट के अनुसार १४० मि० ग्रा० प्रतिशत (140 M. Gm%) है।

आहार तथा उपचार-क्रम नं० ५, १० दिन (ता० २२ से ३१ तक)

आहार-क्रम	उपचार-क्रम
६ बजे नीबू १, गरम पानी २०० ग्राम (शर्बत)	उपचार-क्रम न० ४ की तरह

१२ वजे आहार-क्रम नं० ४ की तरह
६ ,, पपीता २५० ग्राम, संतरा
२, भाजी १५० ग्राम

रोगी की अवस्था : वजन बढने न पाये, इस दृष्टि से रोगी को कम आहार दिया गया, इससे उसको खास कोई तकलीफ नही। पेशाब मे शर्करा बिलकुल नही है। रक्त की शर्करा सामान्य परिमाण मे (११२ मि० ग्रा० प्र० ग०) तथा वजन १७० पौड है। दिन मे पेशाब ६ से ८ बार तथा रात को सिर्फ १ बार ही होता है।

प्रातःकालीन मूत्र-शर्करा कम होने का अनुक्रम :

तारीख	मात्रा
१४	६.६%
१७	लेशमात्र
२२	,,
२	४.५%
४	४%
८	नही
१०	लेशमात्र
२९	नही

निराहार रक्त-शर्करा कम होने का अनुक्रम :

तारीख	परिमाण
२२	१६५ मि० ग्रा० प्र० श०
७	१५२ ,, ,, ,, ,,
२०	१४० ,, ,, ,, ,,
३०	११२ ,, ,, ,, ,,

विवेचन

इस उदाहरण से यह स्पष्ट होता है कि मोटापे के साथ-साथ मधुमेह होने पर रोगी आसानी से उपवास कर सकता है, क्योकि उपवास-काल

मे उसकी चर्बी से पोषण मिल जाता है। इसके विपरीत कृश रोगी को उपवास करवाना खतरे से खाली नही। कृश रोगियो को कभी उपवास न करवाया जाय, अन्यथा उनको निश्चेतनता (Coma) की पूर्ण संभावना रहती है। वजन और घटाने की दृष्टि से रोगी ने अन्तिम ९ दिनो तक भी अल्पाहार किया।

घर जाते समय रोगी आसानी से ४ मील घूम सकता था, क्योंकि पिंडलियो का खिचाव मधुमेह-रोग दूर होने के साथ-साथ पूर्णतः ठीक हो गया था।

ता० २-१०-'५८ एवं ४-१०-'५८ की मूत्र-शर्करा की मात्रा क्रमशः ४५% और ४% थी। यह स्वीकार करने मे मुझे कोई आपत्ति नही है कि इस अकस्मात् मूत्र-शर्करा बढने का सही कारण हमारी समझ मे नही आया। सभावना तो यही है कि रोगी ने हमे विना वताये कोई मीठी वस्तु खा ली होगी।

चिकित्सालय छोड़ते समय रोगी की हालत सन्तोषजनक थी। रोगी को १५-२० दिन और भी रहना चाहिए था। रोगी की इच्छा भी थी, लेकिन व्यापार-सम्बन्धी आवश्यक काम-काज होने के कारण शीघ्र घर जाना पड़ा।

उदाहरण ५

नाम—भानजी शाह, उम्र ६० वर्ष, चिकित्सा-काल ४३ दिन, ऊँचाई ४ फुट ११॥ इञ्च, वजन १३१ पौड।

प्रवेश-तिथि १६-२-'५९ { निराहार रक्त-शर्करा—१८४ मि० ग्रा० प्र० श०
भोजनोत्तर मूत्र-शर्करा—३.३%

चिकित्सालय छोडने की ता० ३०-३-'५९ { निराहार रक्त-शर्करा—७४.४ मि० ग्रा० प्र० श०
भोजनोत्तर मूत्र-शर्करा—०.०%
वजन—११७ पौण्ड

वर्तमान बीमारी, उसकी अवधि एवं लक्षण

मधुमेह की बीमारी गत तीन वर्ष से है। रोगी ने आरम्भ मे कई वर्ष तक आयुर्वेदिक इलाज करवाया एवं आहार मे थोडा संयम रखा, लेकिन उससे कोई विशेष लाभ नही हुआ।

पूर्व इतिहास

३८ वर्ष की उम्र मे पेचिश की बीमारी हुई थी, जिसकी तकलीफ एक मास तक रही। १५ वर्ष की उम्र के बाद हर १५ वर्ष मे एक बार पीलिया-रोग होता रहा है। अब तक तीन बार पीलिया-रोग हो चुका है। यह हालत ५६ वर्ष की उम्र तक रही। सन्तान न होने के कारण चिन्तित रहते है। किसी प्रकार का व्यसन नही है।

चिकित्सा

आहार तथा उपचार क्रम नं० १, १३ दिन

आहार-क्रम	उपचार-क्रम
६ वजे नीबू १ गरम पानी २५० ग्राम	६॥ वजे शक्ति के अनुसार घूमना ½ मील तक
८ ,, काढा १५० ग्राम, दूध १०० ग्राम	७ ,, ठंडा कटिस्नान ३ से ५ मिनट
१२ ,, रोटी ५० ग्राम, उबली साग-भाजी २५० ग्राम, कचूम्बर २० ग्राम, चटनी १० ग्राम, नारियल १० ग्राम	८॥ ,, सूर्यस्नान १५ मिनट तथा सर्वांग मालिश ४० मिनट
	२ ,, मिट्टी की पट्टी ४५ मिनट
	४ ,, ठंडा मेहनस्नान ५ मिनट
	७॥ ,, प्रार्थना
४ ,, सूप–टमाटर १०० ग्राम, अन्य साग-भाजी १५० ग्राम	
६॥ ,, पपीता २५० ग्राम, द्राक्ष काली २० ग्राम	

रोगी की अवस्था : तबीयत ठीक है, भूख अच्छी लगती है। शौच साफ होता है।

ता० २३-२-'५९ की मूत्र-शर्करा—०.०%

आहार तथा उपचार-क्रम नं० २, ६ दिन

आहार-क्रम—केवल पानी पर उपवास } ६ दिन तक
उपचार-क्रम—पूर्ण आराम }

रोगी की अवस्था : तबीयत मे सुधार है, उपवास मे कोई कष्ट नही हुआ।

आहार तथा उपचार-क्रम नं० ३, ४ दिन

(प्रतिदिन १०-१२ संतरे का रस, तीन-चार वार मे)

आहार-क्रम—रसाहार

उपचार-क्रम—पूर्ण आराम

रोगी की अवस्था : तबीयत अच्छी है।

आहार तथा उपचार क्रम नं० ४, २० दिन

आहार-क्रम

६ बजे नीबू १, गरम पानी २०० ग्राम
१० ,, सूप (टमाटर १५० ग्राम, साग-भाजी १५० ग्राम)
१२ ,, बाजरा रोटी ३० ग्राम, साग-भाजी उबली १५० ग्राम, छाछ १५० ग्राम
४ ,, सूप सुवह १० बजे की तरह
६ ,, साग-भाजी १५० ग्राम, संतरा २, पपीता १५० ग्राम

उपचार-क्रम

६ बजे घूमना १ मील
८ ,, सूर्यस्नान २० मिनट
९ ,, सर्वांग मालिश १ घंटा
११ ,, सादा स्नान
६ ,, घूमना

रोगी की अवस्था : रोगी का वजन ११७ पौंड है। कुछ अधिक समय तक चिकित्सा की आवश्यकता थी, लेकिन आवश्यक काम के कारण शीघ्र एवं अचानक घर जाना पड़ा।

ता० २२-२-'५९ प्रातःकालीन मूत्र-शर्करा–०.०%।

ता० ८-३-'५९ निराहार रक्त-शर्करा–७४.४ मि० ग्रा० प्र० श०।

मूत्र-शर्करा कम होने का अनुक्रम :

ता० १६-२-'५९—३.३% (भोजन के दो घंटे पश्चात्)

ता० ८-३-'५९–०.०% (भोजन के दो घटे पश्चात्)

रक्त-शर्करा कम होने का अनुक्रम :

ता० १६-२-'५९–१८४ मि० ग्रा० प्र० श०

ता० ८-३-'५९–७४.४ ,, ,, ,, ,,

विवेचन

वृद्धावस्था मे मधुमेह जैसे रोग से मुक्ति पाना मुश्किल होता है। लेकिन उपवास एवं रसाहार के कारण रोगी ने अपेक्षाकृत अल्प अवधि मे स्वास्थ्य-लाभ किया।

●

१०. इनसुलिन की प्रतिक्रिया

सामान्यतः इनसुलिन लेने के पश्चात् रक्त-शर्करा घटने की वजह से मधुमेही की क्षुधा तीव्र हो जाती है। इससे खान-पान मे संयम रखना कठिन होता है। अतः जो एक बार इनसुलिन के आदी हो जाते है, उनका असंयम बढता जाता है और भविष्य मे उनको इनसुलिन का आधार अधिकाधिक लेना पड़ता है।

इनसुलिन की प्रतिक्रिया के फलस्वरूप निम्न लक्षण उत्पन्न होने की संभावना रहती है :

१. त्वचा पर फुन्सियाँ, खुजली, शोथ तथा पित्ती निकलना (Urticaria) आदि की तकलीफ हो सकती है।

२ **सामान्य प्रतिक्रिया :** इनसुलिन का उपयोग विवेकपूर्वक न होकर जब उसका अतिरेक होता है और भूल से रक्त मे अधिक इनसुलिन पहुँच जाता है, तब थकान, कमजोरी, स्नायुदौर्बल्य, चक्कर आना, अधिक भूख लगना, बेचैनी, सिर-दर्द आदि लक्षण प्रकट होते है।

३. **सांघातिक प्रतिक्रिया :** अत्यधिक इनसुलिन-प्रतिक्रिया के फलस्वरूप रोगी को बेहोशी (Coma) आने की पूरी संभावना रहती है। उस समय उपर्युक्त सामान्य प्रतिक्रिया के लक्षणो के साथ-साथ रोगी को ठंडा पसीना छूटने लगता है और अन्त मे वह मूर्च्छित हो जाता है।

इसलिए मधुमेह-निश्चेतनता तथा इनसुलिन-सम्बन्धी निश्चेतनता (Coma), इन दोनो के लक्षणो मे मूलभूत अन्तर है, जिसका ज्ञान होना नितान्त आवश्यक है, क्योकि मधुमेह-सम्बन्धी मूर्च्छा (Coma) मे रोगी की रक्त-शर्करा की मात्रा मे **अत्यधिक वृद्धि** हो जाती है और इसके ठीक विपरीत इनसुलिन की अधिकता के फलस्वरूप जो मूर्च्छा आती है, उसमे रक्त-शर्करा का **अत्यधिक अभाव** हो जाता है, यहाँ तक कि रक्त-शर्करा की मात्रा ५०-६० मि० ग्रा० प्र० श० तक नीचे आ सकती है।

उपर्युक्त सामान्य साघातिक एव प्रतिक्रिया के लक्षण रोगी मे क्रमशः या अचानक प्रकट हो सकते है।

मधुमेह-निश्चेतनता तथा इनसुलिन के प्रतिक्रियास्वरूप निश्चेतनता (Coma) मे कभी-कभी परस्पर विरोधी लक्षण पाये जाते है। सुविधा तथा ज्ञानवृद्धि की दृष्टि से दोनो प्रकार की मूर्च्छा को तुलनात्मक तालिका नीचे दी जाती है।

लक्षण	मधुमेह-निश्चेतनता	इनसुलिन के प्रतिक्रिया-स्वरूप निश्चेतनता
उत्पत्ति	क्रमशः धीरे-धीरे बढती है और कुछ दिनो के बाद आती है	आकस्मिक (मिनटों के भीतर)
आहार	अत्यधिक	अतिअल्प
इनसुलिन (रक्त मे)	अतिअल्प	अत्यधिक
प्यास	अक्सर लगती रहती है	बिलकुल नही
भूख	नहीं लगती	बनी रहती है
उल्टी (वमन)	सामान्यतः होती है	क्वचित्
उदरशूल	सामान्यतः रहता है	नही होता
त्वचा	शुष्क	गीली
कम्पन	बिलकुल नही होता	अक्सर होता है
नेत्रगोलक	मुलायम	सामान्य
दर्शन	जैसे क्षुधा से पीड़ित हो	फीकापन, कमजोरी
श्वसन	रक्त मे आक्सीजन की कमी के कारण श्वास-प्रश्वास की अधिकता	स्वाभाविक
रक्तचाप	गिरने की ओर झुकाव	बढने की प्रवृत्ति
मानसिक अवस्था	बेचैनी, घबराहट	उत्तेजनापूर्ण हिस्टेरिया की तरह
बेहोशी या मूर्च्छा	क्रमशः धीरे-धीरे आती है	एकाएक आ सकती है
मूत्र-शर्करा	अधिक रहती है	नही रहती
कीटोन	हमेशा पायी जाती है	नही पायी जाती
रक्त-शर्करा	उच्च, बढ़ी हुई	निम्न स्तर पर, कम रहती है।

सरल उपचार-विधि

१. एनिमा

प्राकृतिक चिकित्सा मे बड़ी आँत को तत्काल साफ करने के लिए एनिमा एकमात्र नैसर्गिक उपाय है।

एनिमा के साधन

१. एनिमा डिब्बा—ढाई लिटर (चार पिंट का)
२. रबर की नली—४ या ५ फुट लम्बी
३. नॉजल-सैल्युलाइड की
४. कैथेटर-विशेष प्रकार की रबर नली।

साधारणतः कैथेटर के बिना भी एनिमा दिया जा सकता है, परन्तु बच्चे, बूढे तथा दुर्बल रोगी के लिए कैथेटर के द्वारा आँतो मे पानी चढ़ाने मे आसानी होती है।

५. लोहे या लकड़ी की खाट—पैर की तरफ से ३-४ इञ्च ऊपर उठी हुई खाट पर लिटाकर एनिमा देने से आँतो मे पानी आसानी से पहुँचता है। सामान्य खाट के नीचे पैर की तरफ एक-एक इँट रखकर भी सफलतापूर्वक एनिमा दिया जा सकता है। खाट के अभाव मे चटाई या टाट-पट्टी बिछाकर भी एनिमा दे सकते है। ऐसी अवस्था मे कमर को किंचित् ऊपर उठाने के लिए उसके नीचे तकिया रखना आवश्यक है।

६. तेल या वैसलीन—नॉजल या कैथेटर तथा गुदाद्वार मे लगाने के लिए।

एनिमा-सम्बन्धी सूचनाएँ

१. एनिमा का पानी साधारणतया ९९° से १००° तक गुनगुना होना चाहिए।

२. एनिमा का बर्तन रोगी के शरीर-स्तर से २½ से ३ फुट की ऊँचाई पर रखे।

३. नॉजल या कैथेटर को गुदाद्वार मे प्रवेश कराने के पूर्व उनमे से किंचित् पानी बाहर निकाल देना चाहिए, ताकि रबर की नली मे भरी हुई हवा बाहर निकल जाय।

एनिमा मे पानी का परिमाण

साधारणतया एनिमा मे १। से १॥ लिटर तक पानी रखा जाता है। लेकिन आँतो को उत्तेजित करके मलावरोध दूर करने के लिए ½ से १ लिटर पानी पर्याप्त है। एक लिटर पानी मे पाँच ग्राम के हिसाब से नमक या नीबू का रस छानकर मिलाना चाहिए।

एनिमा देने की विधि

१. चित लेटकर : यह एनिमा विधि दुर्बल रोगी के लिए भी आराम-प्रद है। एनिमा लेते समय रोगी के दोनो पैर घुटने तक मुड़े रहे।

२. दाहिनी करवट लेटकर : यह स्थिति काफी सुविधाजनक है। लेकिन यह ध्यान मे रखे कि उस समय दाहिना पैर सीधा रहे और बायाँ कुछ मुड़ा हुआ हो। दाहिना पैर भी बहुत तना हुआ न रखकर ढीला रहे

२. ठंडा कटिस्नान

यह स्नान विशेष प्रकार के बने हुए टब मे किया जाता है। टब मे पानी उतना ही रहना चाहिए, जिससे रोगी के बैठने पर नाभि तक पानी आये।

सूचनाएँ : १. कटिस्नान के पूर्व तथा कटिस्नान करते समय शरीर का कोई दूसरा अंग नही भीगना चाहिए।

२. भोजन तथा कटिस्नान, कटिस्नान एवं सादा स्नान मे एक घण्टे का अंतर रखना चाहिए। हलके पेय के लिए आधे घंटे का अंतर पर्याप्त है।

३. टब मे बैठने के बाद खुरदरे तौलिये से पेडू पर धीरे-धीरे घर्षण किया जाय।

४ ठंडे कटिस्नान के पूर्व तथा बाद मे घूमना, सूखा घर्षण-स्नान (Dry friction bath) आसन या अन्य किसी व्यायाम के द्वारा शरीर को किंचित् गरम कर लेना उचित है, जिससे ठंडे पानी की प्रतिकूल प्रतिक्रिया न हो।

३. मेहनस्नान

१. पुरुष-मेहनस्नान : शिश्न की चमड़ी को किंचित् आगे खींचते हुए शिश्नमुंड (Penis) को पूरी तरह ढँककर बाये हाथ को दो अँगुलियो से पकड़ रखना चाहिए। अब दाहिने हाथ मे छोटा मुलायम कपड़ा लेकर सामने रखे हुए शीतल जल मे बार-बार भिगोकर अँगुलियो से पकड़े हुए चमडी के अग्रभाग पर केवल स्पर्श करते जायँ, घर्षण नही करना चाहिए।

कटिस्नान के टब मे शीतल जल भरकर उनमे छोटा स्टूल या चौकी रखकर उस पर काफी आगे सरककर बैठना चाहिए। स्टूल या चौकी की ऊँचाई पानी की सतह से १-२ इंच ऊपर रहे, ताकि पानी का स्पर्श निश्चित स्थान के अतिरिक्त कही न होने पाये।

२ स्त्री-मेहनस्नान : ऊपर बताये अनुसार पानी से भरे हुए टब मे चौकी रखकर बैठना चाहिए। बाद मे योनि के दोनो ओष्ठो पर मुलायम कपड़े से ठंडे पानी का स्पर्श किया जाय।

४. गरम-ठंडा सेक

गरम सेंक के लिए आवश्यकतानुसार १०४° गरम पानी मे ३-४ तह-वाला कपड़ा या मोटा तौलिया भिगोकर प्रयोग करना चाहिए और ठंडे सेंक के लिए ६५° ठडा पानी या मटके के पानी मे इसी प्रकार कपड़ा भिगोना चाहिए।

इस प्रकार का गरम-ठंडा सेक छाती, पेट, गला, कमर, रीढ आदि स्थानों पर दिया जा सकता है। इससे विभिन्न अंगो की सूजन एवं दर्द मे काफी लाभ होता है। सेंक की शुरूआत गरम एवं अंत ठडे से करना चाहिए।

५. सूर्य-स्नान

प्राकृतिक चिकित्सा मे सूर्य-स्नान का बहुत महत्त्व है। इसके सेवन से विटामिन 'डी' की प्राप्ति होती है। तेल-मालिश के समय या उसके पश्चात् सूर्य-स्नान करना अधिक लाभदायक है। स्थान की सुविधा होने पर पूर्ण नग्न होकर सूर्य-स्नान लेना उत्तम है, अन्यथा कम-से-कम कपड़ा पहनकर लें। स्त्रियो को सूर्य-स्नान लेने की पर्याप्त सुविधा न होने पर खूब महीन या झीना कपडा पहनकर या ओढकर धूप मे बैठने से भी सूर्य-स्नान का लाभ मिल जाता है।

६. मिट्टी का लेप तथा पट्टियाँ

मिट्टी कंकड़-रहित, साफ तथा कुछ भुरभुरी होनी चाहिए। ऐसी मिट्टी को महीन कूटकर वारीक चलनी से छान ले, फिर इस मिट्टी को उपयोग मे लाने के १२ घंटे पूर्व मिट्टी के बर्तन मे भिगो देना चाहिए।

मिट्टी की पट्टी के लिए कपड़ा मुलायम, महीन तथा झीना होना चाहिए। पुराना कपड़ा इस जरूरत को ठीक तरह पूरी करता है। साधारणतया मिट्टी की पट्टी आध इंच मोटी होनी चाहिए। विशेष

अवस्थाओं मे दुर्बल रोगी के नाजुक अंगों पर केवल १/३ या १/४ इंच मोटी पट्टी रखी जा सकती है। पट्टी की लम्बाई-चौडाई अंग की आकृति पर निर्भर करती है।

सामान्यतः ठंडी मिट्टी की पट्टी या लेप को १/२ से १ घटे तक रखना चाहिए। शरीर की उष्णता से गरम होने पर पट्टी वदल देनी चाहिए। मिट्टी की पट्टी का प्रयोग लगातार वाछनीय होने पर उसको १/२ से १ घंटे मे बदलते रहना चाहिए। गुण की दृष्टि से मिट्टी की पट्टी की अपेक्षा मिट्टी का लेप (सीधी मिट्टी) रखना अधिक लाभदायक है।

परिशिष्ट : २

आहार-विधि

तुलसी-काढ़ा

आवश्यकतानुसार पानी लेकर उसमे तुलसी की पत्तियाँ डालकर अच्छी तरह उबाले, ताकि पत्तियो का अर्क पानी मे उतर आये। फिर उसको कपड़े या तार की चलनी से छान ले। काढ़ा तैयार करते समय उसमे पानी की मात्रा १०० ग्राम अधिक रखे और उबलने के बाद जितनी जरूरत हो उतना ही पानी बचाये। काढे का पानी और दूध का परिमाण रोगी की हालत देखकर कम-ज्यादा किया जा सकता है।

मट्ठा या छाछ

१. **मट्ठा :** दही को मथनी से हिलाकर उसका पूरा मक्खन निकालते समय दही मे कम-से-कम (१ लिटर मे १०० ग्राम के हिसाब से) पानी मिलाया जाय। इस प्रकार तैयार किया हुआ मट्ठा काफी गाढा होता है।

२. छाछ : उपर्युक्त विधि से मट्ठा तैयार करके उसका आधा पानी मिलाया जाय अर्थात् एक लिटर मट्ठे मे आधा लिटर पानी मिलाया जाय। पतले मट्ठे को छाछ कहते है।

सूचनाएं : १. रोगी आवश्यकतानुसार मट्ठा या छाछ मे पानी की मात्रा कम-ज्यादा कर सकते है।

२. मक्खन निकला हुआ मट्ठा या छाछ गुणकारी होता है।

३. मक्खन निकाल्लने की सुविधा न होने पर पहले दही की मलाई की तह को ऊपर-ऊपर निकाल ले और शेष दही मे उससे दुगुना या तिगुना पानी मिलाकर छाछ वना सकते है।

सूप

३०० ग्राम सूप तैयार करने के लिए निम्न वस्तुएँ आवश्यक है :

१. पत्ता भाजी (मेथी, धनिया, पालक, मूली के पत्ते आदि) २०० ग्राम वारीक कटी हुई।

२. शाक (गाजर, टमाटर, लौकी, मूली, तुरई, टिण्डा आदि) १५० ग्राम। कद्दूकस पर वारीक किया हुआ।

३. पानी ५०० ग्राम।

नोट : सूप में हरी धनिया आवश्यक है।

साग-भाजी

साग : गाजर, टमाटर, लौकी, तुरई, गलका, टिण्डा आदि।

भाजी : चौलाई. मेथी, हरी, धनिया, मूली के पत्ते आदि।

उपर्युक्त साग-भाजियों में से आवश्यक मात्रा मे चीजें लेकर पहले खूब अच्छी तरह धो लें। फिर उन्हे काटें। यदि साग-भाजी को कूकर में पकाना हो तो पानी डालने की जरूरत नही है। सीधी आँच पर पकाते

समय थोड़ा पानी डालना चाहिए। साग-भाजी से पूरा लाभ उठाने के लिए उसको उचित मात्रा मे ही पकाये, अधिक नही।

कचूम्बर या सलाद

कचूम्बर के लिए उन्ही साग-भाजियो का प्रयोग करना चाहिए, जो कच्ची खायी जा सकें। ककड़ी, गाजर, मूली, प्याज, टमाटर, पत्तागोभी इत्यादि और पत्ता-भाजी मे लेटव्हिस् के पत्ते, हरी धनिया, मूली के पत्ते आदि।

कचूम्बर के मिश्रण मे ऋतु के अनुसार परिवर्तन करे। सब्जियाँ ताजी हो तथा खूब चबाकर खाये। प्रारम्भ मे अल्पमात्रा मे लेकर बाद मे क्रमशः बढाना चाहिए।

सूखे फल

किशमिश, कालोद्राक्ष, मुनक्का, खजूर, जर्दालू, अंजीर आदि सूखे फलो मे से जिस फल को भिगाना हो, उसको खूब अच्छी तरह धोकर चिपके कचरे को निकाल दे। भिगोते समय पानी का परिमाण इतना हो कि सूखे फल पानी मे डूब जायँ। पूरी तरह भीगकर फूल जाने के बाद जो पानी शेष रहता है, उसे फेकना नही चाहिए, क्योकि उसमे सूखे फल का अर्क होता है। कब्ज को दूर करने तथा पोषण को दृष्टि से सूखे फल बहुत उपयोगी होते है।

●

समय थोड़ा पानी डालना चाहिए। साग-भाजी से पूरा लाभ उठाने के लिए उसको उचित मात्रा मे ही पकाये, अधिक नही।

कचूम्बर या सलाद

कचूम्बर के लिए उन्ही साग-भाजियों का प्रयोग करना चाहिए, जो कच्ची खायी जा सके। ककड़ी, गाजर, मूली, प्याज, टमाटर, पत्तागोभी इत्यादि और पत्ता-भाजी मे लेटव्हिस् के पत्ते, हरी धनिया, मूली के पत्ते आदि।

कचूम्बर के मिश्रण मे ऋतु के अनुसार परिवर्तन करे। सब्जियाँ ताजी हो तथा खूब चवाकर खाये। प्रारम्भ मे अल्पमात्रा मे लेकर बाद मे क्रमशः बढाना चाहिए।

सूखे फल

किशमिश, कालोद्राक्ष, मुनक्का, खजूर, जर्दालू, अंजीर आदि सूखे फलो मे से जिस फल को भिगाना हो, उसको खूब अच्छी तरह धोकर चिपके कचरे को निकाल दे। भिगोते समय पानी का परिमाण इतना हो कि सूखे फल पानी मे डूब जायँ। पूरी तरह भीगकर फूल जाने के बाद जो पानी शेष रहता है, उसे फेकना नही चाहिए, क्योंकि उसमे सूखे फल का अर्क होता है। कब्ज को दूर करने तथा पोषण को दृष्टि से सूखे फल वहुत उपयोगी होते है।